आज़ादी का
अमृत महोत्सव

भारतीय कृषि:
प्राकृतिक एवं आधुनिक प्रौद्योगिकियां

सुरेन्द्र कुमार गुप्ता, पवन कुमार शर्मा एवं प्रेम कुमार

विस्तार निदेशालय
शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एंड प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
जम्मू-180 009 (JKUT)

2022

भारतीय कृषि:
प्राकृतिक एवं आधुनिक प्रौद्योगिकियां

सुरेन्द्र कुमार गुप्ता
पवन कुमार शर्मा
प्रेम कुमार

भारतीय कृषि प्राकृतिक एवं आधुनिक प्रौद्योगिकियां

संकलन एवं सम्पादन

डॉ. सुरेन्द्र कुमार गुप्ता
विस्तार निदेशक

डॉ. पवन कुमार शर्मा
वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र

डॉ. प्रेम कुमार
वैज्ञानिक, मत्स्य पालन

प्राक्कथन

प्रो. जे.पी. शर्मा
कुलपति, स्कास्ट -जम्मू

भारतीय कृषि का इतिहास दुनिया में सबसे पुराना है जिसका लिखित प्रमाण अनेक ग्रंथों में उपलब्ध है। प्राचीन कृषि विज्ञान के सिद्धांत आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने हजारों साल पहले थे। पुरातन काल में ही पराशर ऋषि ने कृषि की बारीकियों जैसे सही समय पर बीज रोपण, सिंचाई आदि का उल्लेख किया है। आचार्य चाणक्य, जो एक अर्थशास्त्री थे, ने कृषि और पशु धन प्रबंधन पर ऐसे नियमों का वर्णन किया है जिनमें आज भी बहुत बड़ी व्यावहारिकता है।

वैदिक विज्ञान में कृषि की अवधारणा को चक्र के रूप में दिखाया गया है। यह कृषि और पशुपालन को समान महत्व देता है। इस चक्र में, भूमि, जानवरों और मनुष्यों सभी ने एक दूसरे के पूरक के रूप में कार्य किया है। आज, हम टिकाऊ खेती, प्राकृतिक खेती, सहज खेती और जैविक खेती के बारे में बात करते हैं जो हजारों वर्षों से भारत की परंपरा रही है।

पारंपरिक ज्ञान के अलावा, हमें किसान समुदाय की बेहतरी के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकियों को इकट्ठा करने की भी आवश्यकता है। आज सतत विकास के साथ हमारे कृषि क्षेत्र को मजबूत करने की आवश्यकता है और आधुनिक प्रौद्योगिकियों के साथ प्राकृतिक प्रथाओं को अपनाने से हम अपने भविष्य को सुरक्षित कर सकते हैं।

स्कास्ट-जम्मू कृषि मेला 2022 का विषय प्राकृतिक खेती के साथ-साथ आधुनिक प्रौद्योगिकियों दोनों पर ध्यान केंद्रित करना है। मुझे यह जानकर खुशी हो रही है कि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने पारंपरिक और आधुनिक खेती के प्रमुख विषयों को संक्षेप में प्रस्तुत करने और समामेलित करने का प्रयास इस पुस्तिका के माधयम से किया है। मैं इस उपयोगी प्रकाशन के लिए में लेखकों को बधाई देता हूं।

Msham

प्रो जे.पी. शर्मा

विषय वस्तु

क्रमांक	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	पारंपरिक एवं आधुनिक कृषि का समन्वय: सेहत, उत्पादन तथा पर्यावरण के लिए	एस के गुप्ता, प्रेम कुमार और पवन कुमार शर्मा	1
2.	मशरूम की वर्ष भर खेती द्वारा किसानों में आत्मनिर्भरता	सचिन गुप्ता, अमरीश वैद, रणवीर सिंह एवं संतोष कुमार सिंह	10
3.	कृषि क्षेत्र में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी	जगदीश कुमार	17
4.	मधुमक्खी पालन का आरम्भ कब और कैसे करें	देविंदर शर्मा	21
5.	जम्मू और कश्मीर राज्य में मत्स्य पालन के अवसर, बाधांए एवं तकनीकी	प्रेम कुमार, पुनीत चौधरी एवं मुनीश्वर शर्मा	33
6.	ब्रांडिंग और विपणन: कृषि आय बढ़ाने के बेहतर विकल्प	पवन कुमार शर्मा, सूरज प्रकाश, सुधीर सिंह जम्वाल और जगदीश कुमार	39
7.	जैविक खेती-जलवायु संरक्षण के लिए जरुरी	नरेंद्र पनोत्रा, विकास शर्मा, पवन शर्मा और राकेश शर्मा	43
8.	जम्मू और कश्मीर में बागवानी की स्थिति-एक आर्थिक परिप्रेक्ष्य	अमित जसरोटिया, आरती शर्मा, राकेश शर्मा, अनिल भट्ट और दीप जी भट्ट	45
9.	वैदिक कृषिः कृषि विज्ञान और वैदिक विज्ञान से कृषि उत्पादकता और पर्यावरण संरक्षण में स्माव्यतता	दिक्षा, शौर्या शर्मा और सुधाकर द्विवेदी	47
10.	शून्य बजट प्राकृतिक खेती से अधिक लाभ	प्रदीप कुमार कुमावत, रीना, तालीम, रंजना बाली एवं पुष्पेंद्र कुमार यादव	50

1. पारंपरिक तथा आधुनिक कृषि का सामंजस्य: सेहत, उत्पादन तथा पर्यावरण

प्रोफेसर जे.पी. शर्मा' और सुमति शर्मा

कुलपति, शेर-ए-कश्मीर कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू

भारत शुरू से ही कृषि प्रधान देश रहा है। हमारे पूर्वजों द्वारा खेती को उत्तम माना गया था और खेती एक विज्ञान के रूप में विकसित हुई। पुराने समय में लोगों के बीच किसी न किसी रूप में कृषि को किया जाता रहा है। ब्रिटिश शासनकाल में खाद्यान्न के अतिरिक्त अन्य अन्य व्यापारिक फसलों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने तथा उसके बाद जनसंख्या में बढोतरी के कारण एक समय देश को खाद्यान्न की कमी से भी गुजरना पड़ा जिसने हरित क्रांति को जन्म दिया और देश ने खाद्यान्न उत्पादन में अत्यधिक तरक्की की है।

केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा मुख्य खरीफ फसलों के उत्पादन के प्रथम प्रथम अग्रिम अनुमान 2021-22 के अनुसार खरीफ सीजन में 150.50 मिलियन टन रिकार्ड खाद्यान्न उत्पादन का अनुमान जताया है। इस दौरान चावल का कुल उत्पादन 107.04 मिलियन टन अनुमानित, पोषक मोटे अनाज का उत्पादन 34 मिलियन टन, कुल दलहन उत्पादन 9.45 मिलियन टन अनुमानित है। 2021-22 के दौरान देश में कुल तिलहन उत्पादन 23.39 मिलियन टन तथा गन्ने का उत्पादन 419.25 मिलियन टन अनुमानित है। इन सभी का उत्पादन पिछले वर्षों की तुलना में अधिक है।

यह उपलब्धियां अपने साथ समस्याएं भी लाई हैं। हरित क्रांति में संकर बीज किस्मों, रासायनिक उर्वरकों, नई तकनीक व मशीनों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया गया। रासायनिक, उर्वरकों जैसे यूरिया, डीएपी, कीटाणुनाशक तथा खरपतवार नाशक दवा का अत्यधिक उपयोग करने से मिट्टी की स्वाभाविक उर्वरा शक्ति में कमी हुई तथा बड़ी मात्रा में कृषि भूमि बंजर हो गई, हमारे परंपरागत बीज लुप्त हो गए तथा संकर बीजों पर निर्भरता बढ़ गई। उपज तो अच्छी प्राप्त हुई लेकिन रसायनों का दुष्प्रभाव मनुष्यों और जानवरों पर जब देखा गया तो किसानों एवं कृषि वैज्ञानिकों का विचार पुनः बदला और पुराने पथ पर जाने को मजबूर किया। खाद्य पदार्थों में कैडमियम तथा शीशा एवं अन्य अवांछित तत्वों की मात्रा अनुपात से अधिक पाई गई जिसे कैंसर जैसे रोगों का मुख्य कारक माना गया। संचित जल में भी हानिकारक तत्वों की मात्रा अधिक पाई गई। गांवों, कस्बों का जलाशय इन रसायनों के द्वारा प्रदूषित हुआ जिसने पालतू जानवरों के साथ जलीय पौधों एवं मछलियों को प्रभावित करते हुए खाद्य चक्र के माध्यम से मनुष्यों में पहुंच कर अनेक व्याधियों को जन्म दिया। कीटनाशक दवाओं का अनुचित प्रयोग, भूमि पर औद्योगिक कचरे, कूड़ा कर्कट तथा मल-मूत्र का अनुचित रीति से विसर्जन करना, अनुचित रीति से भूमि से वृक्षों और वनों को काटना धरती तथा मानव समाज के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। विभिन्न प्रकार के रसायनों के अत्यधिक इस्तेमाल से आंत्रशोध, एलर्जी, हेपेटाइटिस, हृदय रोग एवं कैंसर होने की संभावना

बढ़ी है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के सर्वे के अनुसार 20-25 हजार व्यक्ति प्रतिवर्ष इन रसायनों रसायनों के प्रभाव से अकाल मृत्यु को प्राप्त करते हैं। अधिकतर लोगों का मानना है की खेती खेती के बदलते स्वरूप में उत्पन्न खाद्यान्न से मनुष्य का स्वास्थ्य क्षीण हो रहा है इसका असर मिट्टी की सेहत के साथ भू-जल स्तर और पर्यावरण की गुणवत्ता पर भी पड़ता है।

इन सभी समस्याओं को ध्यान में रखते हुए पृथ्वी, मानव व पर्यावरण के बीच मधुर, परस्पर लाभदायी तथा दीर्घायु संबंधों की अवधारणा को आधार बनाकर आज एक बार पुनः समस्त विश्व में प्राकृतिक खेती की परिकल्पना की जा रही है तथा इसकी विभिन्न विधाओं को अपनाया जा रहा है जिसमें पर्यावरण तथा स्वास्थ्य दोनों हो सुरक्षित रहे जिसके परिणामस्वरूप जैविक खेती को अपनाने का प्रचलन आरंभ हुआ और आज अधिकांश देश इसके अनुयायी बन गए हैं। भारत के माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कई बार रासायनिक खादों के अंधाधुंध इस्तेमाल पर चिंता जाहिर कर चुके हैं तथा वे किसानों से जैविक और प्राकृतिक खेती को अपनाने की अपील करते रहे हैं। 16 दिसंबर 2021 को एक कार्यक्रम में प्रधानमंत्री ने कहा कि कृषि से जुड़े हमारे प्राचीन ज्ञान को हमें न सिर्फ फिर से सीखने की जरूरत है, बल्कि उसे आधुनिक समय के हिसाब से तराशने की भी जरूरत है। इस दिशा में हमें नए सिरे से शोध करके प्राचीन ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक फ्रेम में ढालना होगा। उन्होंने कहा कि रसायन और रसायनिक उर्वरकों ने हरित क्रांति में अहम रोल निभाया है लेकिन इसके विकल्पों पर भी साथ ही साथ काम करते रहने की जरूरत है।

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बिंदु है क्योंकि आज भी देश की बढ़ती हुई आबादी की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये सघन खेती बहुत महत्त्वपूर्ण है और उसके साथ ही साथ सेहत और पर्यावरण का ध्यान भी बहुत आवश्यक है।

खेती की पारंपरिक एवं आधुनिक विधाएँ

पारंपरिक खेती

अगर हम पारंपरिक तथा आधुनिक खेती की बात करें तो जैविक खेती, वैदिक खेती, शिवयोग खेती, जैवगातिशील खेती, ऋषि खेती इत्यादि को मुख्य रूप से पारंपरिक खेती का स्वरुप माना जाता है आजकल जैविक खेती जिसे आर्गेनिक एग्रीकल्चर भी कहते हैं, इसको आधुनिक कृषि पद्धति के रूप में प्रचलित करने का प्रयास अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किया जा रहा रहा है। परंतु यह हमारे देश की प्राचीन कृषि पद्धति रही है जिसे वैदिक कृषि भी कहा गया है। कृषक प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए वैज्ञानिक तथ्य को पूर्णरूपेण समझते हुए कृषि कार्य में संलग्न थे और इन्हें इच्छित सुफलदायी परिणाम प्राप्त होता था। मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखते हुए मानव कल्याण के साथ पर्यावरण संतुलन स्थापित रहता था। यह खेत, खलिहान, श्रमिक एवं उपभोक्ताओं के लिए किसी भी प्रकार से हानिकारक प्रभाव से रहित थे।

आज के समय में जैविक खेती का नीति निर्धारण प्रक्रिया में प्रवेश तथा अंर्तराष्ट्रीय बाजार में उत्कृष्ट उत्पाद के रूप में पहचान इसकी बढ़ती महत्ता का प्रतीक है। विगत दो

दशकों में विश्व समुदाय में खाद्य गुणवत्ता सुनिश्चित करने के साथ पर्यावरण को स्वस्थ रखने रखने हेतु जागरूकता बढ़ी है। आज रासायनिक प्रदूषण से तंग आकर देश या विदेश के वैज्ञानिक जैविक खेती करने को प्रोत्साहित कर रहे हैं। इस पद्धति के बारे में पुनः नए सिरे से कृषकों में जागृति तथा विश्वास बढ़ रहा है। इस विधा से न केवल स्वस्थ वातावरण, उपयुक्त उत्पादकता तथा प्रदूषणमुक्त खाद्य प्राप्त होगा बल्कि इसके द्वारा संपूर्ण ग्रामींण विकास विकास की एक नई स्वपोषित स्वावलंबी प्रक्रिया शुरू होगी। शुरूआती हिचकिचाहट के बाद जैविक खेती अब विकास की मुख्य धारा से जुड़ रही है प्रारंभिक काल से अब तक जैविक खेती के अनेक रूप प्रचलित हुए हैं स्वस्थ मानव, स्वस्थ मृदा तथा स्वस्थ खाद्य के साथ स्वस्थ व टिकाऊ वातावरण के प्रति संवेदनशीलता आज इसके प्रमुख बिन्दु हैं।

वैदिक खेती

वेदिक खेती उसे कहते है जिसका वर्णन वेदों और अन्य सनातन धर्मग्रंथों में मिलता है। चूंकि वेदों की रचना हमारे महान ऋषियों ने की है इसलिये इसे ऋषि कृषि भी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है की वैदिक खेती में खेती से उत्पन्न खाद्यान्न मनुष्य के लिए स्वास्थ्य प्रद होता है। इस विधा में मनुष्य कम से कम प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करता है। समय के साथ किसान परंपरागत खेती से दूर होते गए और वैदिक ज्ञान भूलते गए।।आवश्यकता है हम वेदिक खेती के सिद्धांतों और उनके उदेश्यों के अनुसार खेती करें ताकि खेती टिकाऊ हो, धरती माता, जल, वायु, पर्यावरण प्रदूषित ना हो, किसानों को भी आर्थिक फायदा पहुंचाने वाली व उत्पादित खाद्यान्न से मानवमात्र को स्वास्थ्यलाभ हो।

शिवयोग (वैदिक) कृषि

शिवयोग (वैदिक) कृषि की विधि में मन्त्रों का उपयोग कृषि का उत्पादन बढाने में किया गया है। इस कृषि में मंत्रोच्चार कर न केवल जमीन की उर्वरा शक्ति, बल्कि बीज अंकुरण की की क्षमता भी बढ़ाई जा सकती है। इसमें विभिन्न बीज मंत्रों के साथ साधना की जाती है। वैदिक खेती से कृषि लागत में 70 प्रतिशत तक की कमी की जा सकती है।

जैव गतिशील खेती

जैवगतिशील कृषि प्रणाली की उत्पत्ति 1920 के दशक के दौरान ऑस्ट्रियाई दार्शनिक श्री रुडोल्फ स्टेनर द्वारा दी जाने वाली व्याख्यान की एक श्रृंखला से हुई थी। देश के कृषि वैज्ञानिकों ने खेती की इस वैदिक तकनीक को लाभप्रद बताया है। इस को अग्निहोत्र कृषि भी कहते हैं। वेदों में इसका उल्लेख है। इसे अपनाने से पर्यावरण, कृषि व किसान सभी को लाभ मिलेगा। स्वस्थ जीवन शैली पर आधारित कृषि की यह प्राचीन विधा आज समय की माग बन गई है।

ऋषि-कृषि

ऋषि-कृषि देशपांडे कृषि तकनीक वैदिक साहित्य और ब्रह्मांडीय ऊर्जा पर आधारित है। ऋषि-कृषि तकनीक का उद्देश्य ब्रह्मांडीय ऊर्जा की मदद से मिट्टी को हमेशा जीवित रखना है,

है, क्योंकि यह पौधे के विकास का एकमात्र स्रोत है।

जैविक खेती

जैविक खेती (ऑर्गेनिक फार्मिंग) कृषि की वह विधि है जो संश्लेषित उर्वरकों एवं संश्लेषित संश्लेषित कीटनाशकों के अप्रयोग या न्यूनतम प्रयोग पर आधारित है, तथा जो भूमि की उर्वरा उर्वरा शक्ति को बचाये रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करती है। विश्व खाद्य संगठन की एक अन्य परिभाषा के अनुसार "जैविक खेती एक ऐसी अनूठी कृषि प्रबंधन प्रक्रिया है जो कृषि वातावरण का स्वास्थ्य, जैव विविधता, जैविक चक्र तथा मिट्टी की जैविक प्रणालियों का संरक्षण व पोषण करते हुए उत्पादन सुनिश्चित करती है। इस इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार के संश्लेषित तथा रसायनिक पदार्थों के उपयोग के लिये कोई स्थान नहीं है"। दार्शनिक परिभाषा के अनुसार जैविक खेती का अर्थ प्रकृति के साथ जुड़कर खेती करना है। इस प्रक्रिया में सभी अवयव व प्रणालियां एक-दूसरे से जुड़ी हैं।

वैदिक खेती/जैविक खेती की विभिन्न विधियाँ मृदा की उर्वरता एवं कृषकों की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णतः सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में इन खेतियों की विधि और भी अधिक लाभदायक है। इन विधियों द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके इसके साथ ही कृषक भाइयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतराष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा में कृषक भाई अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित न हों, शुद्ध वातावरण रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे, इसके लिये हमें जैविक खेती की कृषि पद्धतियाँ को अपनाना होगा होगा जोकि हमारे नैसर्गिक संसाधनों एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदूषित किये बगैर समस्त जनमानस को खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेगी तथा हमें खुशहाल जीने की राह दिखा सकेगी।

आधुनिक खेती

शाब्दिक अर्थो मे देखा जाये तो आधुनिक खेती का अर्थ कृषि की उस उन्नत एवं वैज्ञानिक पद्धति से है जिसमें फसलों का उत्पादन आधुनिक कृषि यंत्रों, कृषि रासायनों, उन्नतशील बीजों के साथ ही साथ फसलों पर लगने वाले विभिन्न प्रकार के रोगों एवं कीटों का नियंत्रण आधुनिक तौर तरीकों का उपयोग करते हुए किया जाता है तथा भरपूर पैदावार प्राप्त की जाती है। दिन प्रति दिन बढ़ती जनसंख्या का दबाब तथा सिमटती हुई भूमि की वजह से आधुनिक खेती को अपनाना भी बहुत जरूरी है क्योंकि इसी से सभी को भोजन उपलब्ध हो सकता है और कीमतों को भी काबू में रखा जा सकता है। आधुनिक खेती में सभी आधुनिक तकनीकियों तथा प्रोद्योगिकीयों के साथ-साथ रासायनिक खादों का भी उपयोग उपयोग होता है।

आधुनिक खेती का महत्व

हमारे देश के साथ ही साथ सम्पूर्ण विश्व की जनसंख्या जिस तेजी के साथ वृद्धि कर रही रही है उनके लिए भोजन जैसी प्रारंभिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए आधुनिक खेती का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आज हमारी सभी खाद्य पदार्थों की उपलब्धता, आहार विविधता एवं उच्च प्रोटीन खाद्य उत्पादों तक जो पहुंच है उसका एकमात्र योगदान आधुनिक खेती को ही जाता है। हमारा देश खाद्यान्नों के मामले में जो निर्यात कर पा रहा है उसका एक मात्र कारण आधुनिक खेती ही रही है। यही कारण है कि आज हम आधुनिक कृषि के बिना इस धरती की कल्पना भी नहीं कर सकते।

आधुनिक खेती के नए आयाम

आधुनिक खेती में नित नए प्रोयोग हो रहे है और नई नई तकनीकियां विकसित की जा रही हैं जिससे की खेती में कम श्रम और अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके। इनमे से ड्रोन प्रौद्योगिकी तथा नैनो फ़र्टिलाइज़र प्रमुख है और यह खेती में एक नया परिवर्तन ला सकते हैं अतः यहाँ पर इन दोनों की विस्तृत चर्चा करना उचित है।

A. कृषि के लिए ड्रोन प्रौद्योगिकी

वर्तमान में ड्रोन तकनीक का उपयोग आमतौर पर रक्षा क्षेत्र और भूमि अभिलेखों की डिजिटिलाईजैसन में किया जाता है। ड्रोन में भारतीय कृषि को बदलने की काफी संभावनाएं हैं। भविष्य में प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ ड्रोन का उत्पादन किफायती होने की उम्मीद है। है। उपभोक्ता रुपये में उत्पादन, उत्पादकता और किसानों की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए ड्रोन नई पीढ़ी और भविष्य की तकनीक है। कृषि क्षेत्रों में उपग्रह से इमेजनरी की तुलना में ड्रोन वास्तविक समय के साथ उच्च गुणवत्ता वाली इमेजनरी प्रदान करता है। ड्रोन प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग फसल स्वास्थ्य निगरानी, पोषक तत्वों की स्थिति और कमी की निगरानी, रोग निगरानी, पानी की निगरानी, खरपतवार नियंत्रण और बीमा कंपनियों द्वारा फसल नुकसान की निगरानी करने में मददगार है। कृषि में ड्रोन प्रौद्योगिकी में निम्नलिखित गतिविधियों की क्षमता है:

1. मृदा और क्षेत्र विश्लेषण

कुशल क्षेत्र नियोजन के लिए कृषि ड्रोन का उपयोग मिट्टी और क्षेत्र विश्लेषण के लिए किया जा सकता है। उनका उपयोग मिट्टी में नमी की मात्रा, इलाके की स्थिति, मिट्टी की स्थिति, मिट्टी के कटाव, पोषक तत्वों की मात्रा और मिट्टी की उर्वरता का मूल्यांकन करने के लिए किया जा सकता है।

2. वृक्षारोपण

ड्रोन मानसून से पहले जंगल में पेड़ के बीज को प्रसारित करने में मदद कर सकते हैं।

3. फसल स्वास्थ्य निगरानी

ड्रोन द्वारा ली गई तस्वीरों की इमेज प्रोसेसिंग के माध्यम से फसल की स्थिति की निगरानी के लिए ड्रोन का उपयोग किया जा सकता है। फसल के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आवश्यकता आधारित समय पर कार्रवाई की योजना बनाई जा सकती है।

4. पोषक तत्वों की स्थिति और कमी की निगरानी

संभावित उपज प्राप्त करने के लिए पौधे को उचित स्तर के पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। ड्रोन द्वारा ली गई तस्वीरों से फसल के रंग, ताक़त और मजबूती में बदलाव दिखाते दिखाते हुए पोषक तत्वों की कमी का आकलन किया जा सकता है।

5. रोग निगरानी

इंफ्रारेड कैमरे से लैस ड्रोन फसल क्षेत्र की छवि विश्लेषण की मदद से पौधों में फंगल, बैक्टीरिया या वायरल रोग का पता लगा सकता है।

6. जल तनाव निगरानी

ड्रोन कैमरा द्वारा ली गई मल्टीस्पेक्ट्रल छवियां फसल की जल तनाव की स्थिति तक पहुंचने में सहायक होती हैं। क्षेत्र की फसलों की छवि की दृश्य व्याख्या से भी इसका पता लगाया जा सकता है।

7. खरपतवार नियंत्रण

फसल की छवि विश्लेषण के माध्यम से खरपतवार के प्रकोप का आकलन किया जा सकता है।

8. आवेदन खरपतवारनाशी, कीटनाशक और उर्वरक

फसल क्षेत्र में खरपतवारनाशी, कीटनाशकों और तरल उर्वरक के समय पर और सटीक अनुप्रयोग के लिए बड़ी क्षमता वाले ड्रोन का उपयोग किया जा सकता है।

9. जियोफैंसिंग

ड्रोन के ऊपर लगे थर्मल कैमरे आसानी से जानवरों या इंसानों का पता लगा सकते हैं। इसलिए, ड्रोन विशेष रूप से रात में जानवरों से होने वाले बाहरी नुकसान से खेतों की रक्षा कर सकते हैं।

10. फसल उपज में अनुमान

फसलों के क्षेत्र कवरेज और उनकी उपज के आकलन के लिए ड्रोन उपयोगी हो सकता है। यहां तक कि जब सब कुछ योजना के अनुसार चल रहा हो, तब भी फसलों का सर्वेक्षण और निगरानी करने की आवश्यकता होती है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि फसल के समय समय उपज की सही मात्रा उपलब्ध होगी। फसल निगरानी अगले खेती के मौसम को समझने और योजना बनाने में मदद करती है।

11. पशुओं की आवाजाही की निगरानी

पशुधन क्षेत्र को लाभ होगा, क्योंकि पशुओं के साथ-साथ उनके चरागाहों की आवाजाही पर आसानी से निगरानी रखी जा सकती है।

12. पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान

ड्रोन कृत्रिम गर्भाधान के लिए वीर्य की शीशियों को दूर-दराज के केंद्रों तक पहुंचाने में उपयोगी होंगे जो दुर्गम इलाकों के कारण पहाड़ी इलाकों के लिए काफी मददगार साबित होंगे।

13. किसान-उपभोक्ता प्रत्यक्ष विपणन

किसान-उपभोक्ता प्रत्यक्ष विपणन को बढ़ावा देने में भी ड्रोन उपयोगी होंगे। सड़क यातायात पहले से ही अस्त-व्यस्त है और किसान ड्रोन के माध्यम से दूध सहित अपनी खराब होने वाली वस्तुओं को उपभोक्ताओं के रुपये में वृद्धि के साथ बेच सकेंगे।

14. बीमा कंपनी के लिए उपयोगी उपकरण

ओलावृष्टि या अधिक वर्षा के माध्यम से फसल क्षति का आकलन ड्रोन कैमरे द्वारा ली गई वास्तविक समय की तस्वीरों के छवि विश्लेषण की मदद से किया जा सकता है।

B. नैनो तकनीक

एक नए अध्ययन से पता चला है कि किसान नैनो तकनीक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग करके फसल की उपज में वृद्धि कर सकते हैं। जलवायु परिवर्तन, बढ़ती आबादी, जैव ईंधन के उत्पादन के लिए भूमि की मांग और मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट से दुनिया की आबादी के लिए भोजन जुटाना मुश्किल होता जा रहा है। शोधकर्ताओं ने कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग क्षमताओं के साथ स्मार्ट और नैनो तकनीक से की जाने वाली कृषि को मिलाकर एक रोडमैप तैयार किया है इससे दुनिया भर में खाद्य असुरक्षा की चुनौतियों से निपटा जा सकता है। नैनो तकनीक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग कृषि के स्थायी खाद्य उत्पादन के अवसर प्रदान करती है। हम पोषक तत्वों के चक्र और फसल उत्पादकता के लिए मौजूदा मॉडलों को नैनोइनफॉरमैटिक्स से जोड़ सकते हैं ताकि फसलों और मिट्टी दोनों को बेहतर प्रदर्शन करने में मदद मिल सके।

कृषि क्षेत्र में नवाचार का मुख्य उद्देश्य दुनिया भर में बढ़ती आबादी की भूख शांत करना, करना, घटती कृषि भूमि के साथ मिट्टी के स्वास्थ्य तथा उसके संरक्षण और पर्यावरण की गुणवत्ता की रक्षा करना है। बेहताशा कृषि पर्यावरण की गुणवत्ता के लिए एक गंभीर खतरा बन गई है क्योंकि बड़ी मात्रा में पोषक तत्व पानी और हवा में मिल जाते हैं। कृषि धरती को गर्म करने का भी कारण बन रही है, लगभग 11 फीसदी वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कृषि क्षेत्र की वजह से होता है। चिंता की बात यह है कि भूमि में अत्यधिक नाइट्रोजन खाद का उपयोग हो रहा है जिसके परिणामस्वरूप 'लाफिंग गैस' नाइट्रस ऑक्साइड का उत्सर्जन होता है, जो ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ाने में कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में 300 गुना अधिक शक्तिशाली है। वायु में मानवजनित स्रोत नाइट्रस ऑक्साइड उत्सर्जन का लगभग 70 फीसदी के लिए कृषि क्षेत्रों को जिम्मेदार माना गया है।

नैनो उर्वरक फसल उर्वरता के लक्ष्य को हासिल करने, पोषक तत्वों का उपयोग एवं उनकी क्षमता (एनयूई) को बढ़ाने और नाइट्रस ऑक्साइड उत्सर्जन को कम करने में मदद

करते हैं। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन के लक्ष्य को हासिल करने के लिए शून्य ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का समर्थन करने में मदद कर सकते हैं। शोधकर्ताओं ने इस बात पर ध्यान दिया कि नैनो तकनीक चार प्रमुख तरीकों से कृषि उपज को बढ़ाने में मदद कर सकती है:

- उत्पादन दर और फसल की पैदावार में सुधार करके
- मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने और पौधों को इसमें ढलने लायक बनाना
- संसाधनों की क्षमता में सुधार करना, जैसे कि उर्वरक, और प्रदूषण को कम करना
- ऐसे स्मार्ट सेंसर प्लांट विकसित करना जो किसानों को पर्यावरणीय प्रभावों के प्रति सचेत कर सकें।

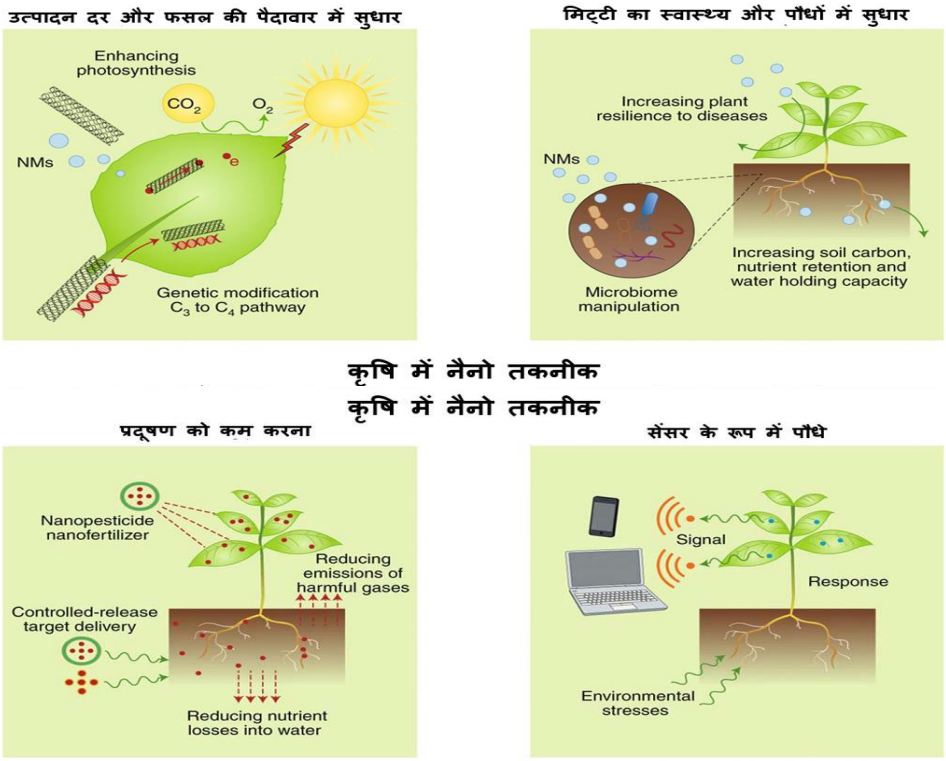

कृषि में नैनो तकनीक

बर्मिंघम विश्वविद्यालय के रिसर्च फेलो डॉ पेंग झांग ने कहा कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) (एआई) और मशीन लर्निंग सहित कम्प्यूटेशनल दृष्टिकोणों की नैनो आधारित कृषि को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका होगी। इस तरह के दृष्टिकोण पहले से ही शुरू हो गए हैं। यह अध्ययन नेचर प्लांट्स में प्रकाशित हुआ है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और नैनो टेक्नोलॉजी को कृषि क्षेत्र में लागू करने से उर्वरकऔर उर्वरकऔर कीटनाशकों के उपयोग के लिए नैनोमेटेरियल्स के डिजाइन मापदंडों की जांच करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाएगी ताकि खाद्य पदार्थों में कम से कम नैनो मेटेरियल अवशेष हो, मिट्टी के स्वास्थ्य पर कम से कम प्रभाव पड़े ताकि सुरक्षित और टिकाऊ कृषि का विकास हो।

एक कृषि देश होने के नाते, भारत विकास के उस स्तर तक पहुंच गया है जहां यह 'सदाबहार क्रांति' की मांग करता है, यानी कम प्राकृतिक संसाधन (पानी, जमीन और ऊर्जा)

के साथ अधिक उत्पादन करना। आज के समय में पारंपरिक तथा आधुनिक कृषि का सामंजस्य बहुत ही जरूरी है क्योंकि अधिक उत्पादन करने के लिए अत्यधिक रासायनिक खादों के इस्तेमाल ने खाद्य पदार्थों को सेहत के लिए नुकसानदायक भी बना दिया है। सघन खेती की सहायता से एक ही खेत में एक वर्ष में एक से अधिक फसलें उगाई जा सकती हैं। इसके लिये उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक दवा तथा पानी की समुचित व्यवस्था के साथ-साथ समय पर कृषि कार्यों को संपन्न करने के लिये आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग ज़रुरी है। इस कृषि में अगर हम रासायनिक खादों के स्थान पर जैविक खादों का उपयोग करना शुरु करें तो यह सेहत के साथ-साथ हमारे पर्यावरण के लिए भी अति उत्तम होगा। हरित क्रांति (1960) से लेकर विभिन गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमो तक, भारत कृषि प्रौद्योगिकी में लगातार विकास कर रहा हैं। हालांकि, भारतीय किसानों में से केवल एक तिहाई ने उन्नत प्रौद्योगिकी अपनाई है। शेष कृषि नवाचारों और खेती के आधुनिक तरीको से अवगत नहीं हैं जो उच्च फसल पैदावार और गुणवत्ता का कारण बन सकते हैं।

2. मशरूम की वर्ष भर खेती द्वारा किसानों में आत्मनिर्भरता

सचिन गुप्ता, अमरीश वैद ,रणवीर सिंह एवं संतोष कुमार सिंह
पादप व्यादि विज्ञान संभाग,
शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय जम्मू

भारत एक कृषि प्रधान देश हैं तथा देश के विभिन्न प्रदेशों में भांति भांति की जलवायु पाई जाती है। इसी प्रकार जम्मू एवं कश्मीर के जम्मू संभाग में भी विभिन्न प्रकार की जलवायु की उपस्थिति वर्ष भर विविध प्रकार की खुम्बों की खेती के लिए उपयुक्त है। शेरे कश्मीर कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय की मशरूम इकाई वर्ष जम्मू संभाग में विविध प्रकार की खुम्बों के उत्पादन के लिए तकनीक विकसित करने में कार्यरत है। किसानों एवं नौजवानों का एक बड़ा वर्ग खुम्बों की खेती कर रोजगार अर्जन कर रहे हैं। मशरूम इकाई में किसानों के लिए प्रशिक्षण शिवरों का आयोजन किया जाता हैं तथा खुम्बों के बीज की उपलब्धता भी सुनिश्चित की जाती है। जम्मू संभाग में विभिन्न खुम्बों की किस्में, उन्हें लगाने का ढंगं, समय एवं जानकारी इस प्रकार हैं:

श्वेत बटन खुम्ब की खेती

भारत वर्ष में श्वेत बटन खुम्ब का उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान है| हमारे देश में इस इस खुम्ब की खेती बडे पैमाने पर की जाती है| इस खुम्ब को शरद ऋतु में उगाया जाता है| इस खुम्ब के उत्पादन के लिए कवक जाल के फैलाव के दौरान 22-250 सल्सिउस तथा फलन के समय 14-180 सल्सिउस तापमान की आवश्यकता होती है तथा 80-85 फीसदी नमी की आवश्यकता पड़ती है|

श्वेत बटन खुम्ब की खेती का तरीका

श्वेत बटन खुम्ब को क्रत्रम ढंग से तैयार खाद पर उगाया जाता है| इसके लिए खाद दो प्रकार से तैयार की जाती है|

लघु विधि:

लघु विधि से खाद तैयार करने में कम समय लगता है लेकिन इसके लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता होती है| मशरूम के बडे उत्पादक इस विधि से खाद तैयार करते हैं तथा अन्य छोटे मशरूम उत्पादकों को यह खाद मशरूम उत्पादन हेतु बेचते हैं|

दीर्घ विधि से खाद तैयार करना:

दीर्घ विधि से खाद तैयार करने में निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है जिसकी मात्रा निम्नलिखित होती है:

गेहूँ का भूसा	: 10 क्विंटल
खल (सरसों)	: 50 किलोग्राम
यूरिया	: 8 किलोग्राम

मुर्गे की बीठ	: 4 क्विंटल
गेहूं का चोकर	: 100 किलोग्राम
जिप्सम	: 50 किलोग्राम

मिश्रण तैयार करना

भूसे को दो दिन तक पक्के फर्श पर रुक रुक कर पानी का छिडकाव करके गीला किया जाता है| भूसे को गीला करते समय अच्छे से पैरों से दबाया जाता है| मुर्गे की बीठ एवं खल को कूटकर बारीक कर लिया जाता है| भूसे एवं सारी सामग्री को एक साथ अच्छे से मिलाकर उसका मिश्रण तैयार कर लेते हैं|

ढेर बनाना

गीले किये गए मिश्रण को लकड़ी के चोखट की सहायता से पांच फुट x पांच फुट ऊंचा ढेर बनाते हैं| ढेर की लम्बाई भूसे की मात्रा पर निर्भर करती है| लेकिन उसकी ऊंचाई व् चौड़ाई पांच फुट ही होनी चाहिए| बाहरी परतों में नमी कम होने पर आवश्यकतानुसार पानी का छिडकाव किया जाता है|

पलटाई क्रम:

पहली पलटाई: (6 वां दिन)

छटे दिन ढेर की पहली पलटाई की जाती है और पलटाई देते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें की ढेर के प्रत्येक हिस्से की उल्ट पल्ट अच्छे ढंग से हो ताकि प्रत्येक हिस्से को उपयुक्त वायु व् नमी प्राप्त हो| नए ढेर का आकार व् नाप भी पहले ढेर के समान होता है| आगे की पलटाई भी इसी प्रकार से की जाती है|

दूसरी पलटाई: (10 वां दिन)

तीसरी पलटाई: 13 वां दिन (जिप्सम भी मिलाएं)

चोथी पलटाई: 16 वां दिन

पांचवी पलटाई: 19 वां दिन

छटी पलटाई: 22 वां दिन

सातवीं पलटाई: 25 वां दिन (इस समय 0.1% नुवआन या मेलाथियान छिडकाव करें)

आठवीं पलटाई: 28 वां दिन

28 वें दिन खाद में नमी व् अमोनिया का परीक्षण किया जाता है| नमी के परीक्षण के लिए कम्पोस्ट को मुठी में लेकर दबाने पर पानी न निचुडे और मुठी गीली हो जाये तो उसका मतलब उसमें 68 से 70 प्रतिशत नमी है और अमोनिया परीक्षण के लिए खाद को सूंघने पर यदि उसमें गऊ मूत्र की सुगंध आती है तो उसका मतलब उसमें अमोनिया है| ऐसी दशा में खाद को तीन दिन के अंतर में 2-3 पलटाई करें और खाद ठंडी होने पर उसमें बीज मिलाएं|

बीज मिलाना (स्पानिंग)

स्पानिंग या बीज मिलाने के लिए अपने हाथों को अच्छे से साबुन से धोएं| फर्श को भी 2 प्रतिशत फोर्मलिन से धोएं| इसके बाद छिडकाव विधि से 0.75 से 1.00 प्रतिशत की दर से बीज मिलाएं| इस प्रकार सौ किलो खाद के लिए 750 ग्राम से ले के 1 किलो खाद बीज पर्याप्त है| बीजित खाद को लिफाफे में भर लें तथा उसका मूंह बची हुई पॉलिथीन से ढक लें| लिफाफे को दो प्रतिशत फोर्मलिन से किटाणुराहित किये गए कमरे में रखें| बैग में कम्पोस्ट एक फूट से कम न हो| कमरे का तापमान 22-250 सल्सिउस व् नमी 80 से 90 प्रतिशत रखें| कमरे का तापमान ज्यादा या कम कूलर या हीटर की मदद से किया जा सकता है|

केसिंग मिश्रण तैयार करना

बीजाई के 15-16 दिन बाद कवक जाल पूरी तरह खाद में फ़ैल जाता है| उस समय उसको केसिंग की आवश्यकता होती है| केसिंग एक प्रकार की मिटटी है जो खुम्ब कलिका बनाने में सहायता करती है| केसिंग में गाय का गोबर (लगभग 2 साल पुराना) व् लोम मिटटी (3:1) को 2 प्रतिशत फोर्मलिन से कीटाणु व् सुत्रक्रमी रहित करते हैं| उसके लिए मिटटी में गड्ढा बनाकर फोर्मलिन का घोल डालते हैं| तत्पश्चात मिटटी को पूरी तरह से पानी पानी व फोर्मलिन में मिला देते हैं| इसके बाद मिटटी को किसी पॉलिथीन शीट से 48 घंटे के लिए ढक कर रखते हैं| 48 घंटे के बाद शीट को उठा देते हैं| केसिंग को बेलचे से उल्ट पलट क्र उसमें से फोर्मलिन की गंध निकलते हैं| केसिंग करने के लिए कवक जाल फैले बैग का मूंह खोलकर उसे हल्का सा दबाते हैं और उसके उपर 1-1.5 इंच केसिंग मृदा डालते हैं| इस समय कमरे का तापमान २२-२५० सल्सिउस व् नमी 80 से 90 प्रतिशत रखते हैं|

केसिंग के उपरांत रख रखाव

केसिंग के उपरांत लिफाफों में प्रतिदिन पानी का स्प्रे किया जाता है व् 8-10 दिन बाद जब कवक जाल केसिंग में फ़ैल जाये तो तापमान 22-250 सल्सिउस से कम करके 16-180 सल्सिउस कर दिया जाता है तथा इस तापमान को बनाये रखना चाहिए, जब खुम्ब कलिकाएं आना शुरू हों तो नमी 80-90 प्रतिशत तक रखी जाती है| उत्पादन कक्ष में 2-3 घंटे के लिए रौशनी व् एक दो घंटे के लिए खिड़की खुली रखें|

खुम्ब की तुडाई व् उपज

खुम्ब कलिकाओं के बनने के 3-4 दिन के बाद कलिका बड़ी खुम्बों में परिवर्तित हो जाती है| जब टोपी का आकार 3-4 सेंटीमीटर हो जाये तो इसे तोड़ लें| सामान्य तापमान पर हम इसे 12 घंटे रख सकते हैं, 2-3 दिन के लिए फ्रिज में व् लम्बे भण्डारण के लिए 18 प्रतिशत नमक के घोल में रख सकते हैं| 45-60 दिन में पूरा उत्पादन मिल जाता है| 1 क्विंटल कम्पोस्ट से 16-18 किलोग्राम मुश्रूम का उत्पादन किया जा सकता है|

ढिंगरी की खेती

इस खुम्ब की खेती बहुत ही आसान व् कम खर्चीली होती है इसलिए यह गरीब किसानों

के लिए उपयुक्त आय का साधन है| भारत में ढिंगरी की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती हैं जिसमें जिसमें से कुछ ग्रीष्मकालीन हैं व कुछ शरदकालीन हैं|

पोषाधार तैयार करना

ढिंगरी की खेती विभिन्न प्रकार के कृषि अवशेषों पर की जाती है लेकिन गेहूं एवं धान का भूसा प्रचलित कृषि अवशेष है| ढिंगरी की खेती में प्रयोग किये जाने वाले अवशेषों को जीवाणुरहित किया जाना चाहिए| उसके लिए माध्यम का रासायनिक उपचार किया जाता है| इस विधि का विवरण इस प्रकार है:

1. किसी ड्रम में 90 लीटर पानी ले कर उसमें 10 किलोग्राम भूसा डुबो लें|
2. इसके साथ ही एक बाल्टी में 125 मिलिलीटर फोर्मलिन और 7.5 ग्राम कार्बेन्डाजिम को 10 लीटर पानी में मिलकर घोल बना लें|
3. बाल्टी में बनाये गए घोल को ड्रम में उड़ेल लें और ड्रम को प्लास्टिक शीट से ढक लें|
4. 18 घंटे बाद ड्रम को साफ़ व् पक्के फर्श पर पलट दें ताकि भूसे में अतिरिक्त पानी निचुड़ निचुड जाये व् फोर्मलिन की महक समाप्त हो जाये| इस प्रक्रिया में 3-4 घंटे का समय लगता है| एक अनुमान के अनुसार 10 किलोग्राम सूखा भूसा उपचार के उपरान्त 30-35 किलोग्राम हो जाता है|

बीजाई करना

बीजाई करने से पहले बीजाई स्थल को अच्छे से पॉलिथीन घोल से उपचारित करें तथा श्रमिक भी अपने हाथों को अच्छे से साफ़ करें| इसके बाद उपचारित किये गए भूसे में 40-50 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज मिला लें| इसे एक 18x24 इंच के लिफाफे में भर लें तथा उसके बाद लिफाफे का मूंह अच्छे से बंद कर लें| इन् लिफाफों के निचले कोनों को थोडा काट लें ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाये| बीजित लिफाफों को उत्पादन कक्ष में रख दें| इस उत्पादन कक्ष में 24 घंटे पहले 2 प्रतिशत फोर्मलिन का छिडकाव किया जाना चाहिए| पॉलिथीन लिफाफों में भूसा भरने से पहले 10-15 सुराख़ किये जाने चाहिये|

फसल प्रबंधन

कवक जाल फैलाव के लिए लिफाफों को कमरे में रखा जाता है| लगभग दो सप्ताह तक कवक इन लिफाफों में पूरी तरह फ़ैल जाता है और एक सफ़ेद जाल बन जाता है| इस समय पॉलिथीन को लम्बा काट दिया जाता है और लिफाफों पे पानी का हल्का छिडकाव किया जाता है| जिस कमरे में लिफाफे रखे जाते हैं उसमें 2-4 घंटे खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिये| इन् कमरों में उपयुक्त तापमान तथा 80-90 प्रतिशत नमी बनाये रखनी चाहिए तथा दिन में कम से कम 4-5 घंटे बल्ब जलाकर रखें जिससे कलिकाओं के विकास में सहायता मिलती है| ऐसी स्थिति में बीजाई के 15-20 दिन बाद में कलिकाएं बनना आरंभ हो जाती हैं|

तुडाई करना

जब छोटी कलिकाएं पंख का आकर ग्रहण कर लें तब इन्हें मोड़कर तोड़ लेना चाहिए| इस तरह 8-10 किलोग्राम सूखे भूसे से 8-10 किलोग्राम धिन्ग्री प्राप्त की जा सकती है|

भण्डारण व उपयोग

ढिंगरी की भण्डारण अवधि बटन खुम्ब से अधिक है| इसको सामान्य तापमान पर 24-48 घंटे ताज़ा रखा जा सकता है| इस खुम्ब को ताज़ा व धूप में सुखा कर प्रयोग कर सकते हैं| सूखे मशरूम को पीस कर भी बनाया जा सकता है जिसका उपयोग बिस्कुट, बडीया या मशरूम सूप बनाने में प्रयोग लाया जा सकता है| आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने पर आचार बना कर रख सकते हैं|

आमदनी

1 किलोग्राम ढिंगरी मशरूम पैदा करने के लिए 30-35 रुपए का खर्च आता है और बाज़ार में ये 80-85 रुपए के भाव से बिकती है| इस प्रकार प्रति किलोग्राम में 45 से 50 रुपए तक आमदनी हो सकती है|

दूधिया मशरूम की खेती

जम्मू व अन्य मैदानी क्षेत्रों में गर्मियों में तापमान 35 से 40 डिग्री सेलसिउस के बीच में होता है और उस समय किसी और मशरूम की खेती नहीं की जा सकती| उस समय दूधिया मशरूम की फसल ली जा सकती है| जम्मू के मौसमी मशरूम उत्पादक केवल बटन मशरूम की खेती पर निर्भर हैं| शरद ऋतु में बटन मशरूम की फसल लेने के बाद वो अपना कार्य बंद कर देते हैं तथा वर्ष भर मशरूम उत्पादन नहीं करते| वर्षभर श्वेत बटन मशरूम की खेती न कर पाने का मुख्य कारण है तापमान में वृद्धि जो बटन मशरूम की खेती के लिए उपयुक्त नहीं है| यदि मशरूम उत्पादक दूधिया मशरूम को खुम्बों के वर्तमान फसल चक्र में सम्मिलित कर लें तो मशरूम उत्पादन काल को बदाया जा सकता है तथा वे वर्षभर मशरूम उत्पादन से स्वरोजगार प्राप्त कर सकते हैं| इस खुम्ब के उत्पादन के लिए कवक जाल के फैलाव के दौरान 30-32 डिग्री सेलसिउस तापमान तथा 80-90 प्रतिशत की आवश्यकता होती है| मई से अगस्त तक इस मशरूम को आसानी से जम्मू संभाग में उगाया जा सकता है|

दूधिया मशरूम उगाने की विधि

इस मशरूम का आकार व रूप श्वेत बटन खुम्ब से काफी भिन्न है| श्वेत बटन मशरूम की अपेक्षा इसका तना काफी मांसल, लम्बा व मोटा होता है| इसकी टोपी छोटी व जल्दी खुलने वाली होती है|

माध्यम का चुनाव

ढिंगरी मशरूम की भाँती इस मशरूम को भी विभिन्न कृषि अवशेषों पर आसानी से उगाया जा सकता है| इस मशरूम के लिए अधिकतर भूसा या पुआल का इस्तेमाल किया जाता है|

माध्यम का उपचार

दूधिया मशरूम में प्रयोग किये जाने वाले कृषि अवशेषों को जिवाणुओं से मुक्त करना पड़ता है जिसके लिए चुने गए कृषि अवशेषों को रसायनिक विधि द्वारा उपचारित किया जाता जाता है|

रसायनिक उपचार

रसायनिक विधि द्वारा माध्यम को उपचारित करने की विधि निम्नलिखित है:

1. किसी ड्रम में 90 लीटर पानी ले कर उसमें 10 किलोग्राम भूसा डुबो लें|
2. इसके साथ ही एक बाल्टी में 125 मिलिलीटर फोर्मलिन और 7.5 ग्राम कार्बेन्डाजिम को 10 लीटर पानी में मिलकर घोल बना लें|
3. बाल्टी में बनाये गए घोल को ड्रम में उड़ेल लें और ड्रम को प्लास्टिक शीट से ढक लें|
4. 18 घंटे बाद ड्रम को साफ़ व् पक्के फर्श पर पलट दें ताकि भूसे में अतिरिक्त पानी निचुड़ निचुड़ जाये व् फोर्मलिन की महक समाप्त हो जाये| इस प्रक्रिया में 3-4 घंटे का समय लगता है| एक अनुमान के अनुसार 10 किलोग्राम सूखा भूसा उपचार के उपरान्त 30-35 किलोग्राम हो जाता है|

बीजाई करना

बीजाई करने से पहले बीजाई स्थल को अच्छे से पॉलिथीन घोल से उपचारित करें तथा श्रमिक भी अपने हाथों को अच्छे से साफ़ करें| इसके बाद उपचारित किये गए भूसे में 40-50 ग्राम प्रति किलो की दर से बीज मिला लें| इसे एक 18x24 इंच के लिफाफे में भर लें तथा उसके बाद लिफाफे का मूंह अच्छे से बंद कर लें| इन् लिफाफों के निचले कोनों को थोडा काट लें ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाये| बीजित लिफाफों को उत्पादन कक्ष में रख दें| इस उत्पादन कक्ष में 24 घंटे पहले 2 प्रतिशत फोर्मलिन का छिडकाव किया जाना चाहिए| इन बीजित लिफाफों को उत्पादन कक्ष में रखे गए racks पे रखा जाता है| इस कमरे में तापमान 28-32 डिग्री सेलसिउस तथा 80-90 प्रतिशत नमी बनाये रखनी चाहिए|

केसिंग मिश्रण तैयार करना व केसिंग परत बिछाना

बीजाई के 15-16 दिन बाद कवक जाल पूरी तरह खाद में फ़ैल जाता है| उस समय उसको केसिंग की आवश्यकता होती है| केसिंग एक प्रकार की मिटटी है जो खुम्ब कलिका बनाने में सहायता करती है| केसिंग में गाय का गोबर (लगभग 2 साल पुराना) व् लोम

मिटटी (3:1) को 2 प्रतिशत फोर्मलिन से कीटाणु व् सुत्रक्रमी रहित करते हैं| उसके लिए मिटटी में गद्दा बनाकर फोर्मलिन का घोल डालते हैं| तत्पश्चात मिटटी को पूरी तरह से पानी पानी व फोर्मलिन में मिला देते हैं| इसके बाद मिटटी को किसी पॉलिथीन शीट से 48 घंटे के लिए ढक कर रखते हैं| 48 घंटे के बाद शीट को उठा देते हैं| केसिंग को बेलचे से उल्ट पलट क्र उसमें से फोर्मलिन की गंध निकलते हैं| केसिंग करने के लिए कवक जाल फैले बैग का मूंह खोलकर उसे हल्का सा दबाते हैं और उसके उपर 1-1.5 इंच केसिंग मृदा डालते हैं| इस समय कमरे का तापमान 30 से 350 सल्सिउस तापमान व नमी 80 से 90 प्रतिशत होनी चाहिए|

फसल प्रबंधन

केसिंग के उपरान्त लिफाफों में प्रतिदिन पानी का छिडकाव व ताज़ी हवा देते हैं| उत्पादन कक्ष में तापमान 30 से 350 सल्सिउस व नमी 80 से 90 प्रतिशत बनाये रखनी चाहिए| ढिंगरी मशरूम की भाँती इस मशरूम की बदवार के लिए भी प्रकाश की आवश्यकता होती है|

तुडाई व उपज

जब मशरूम की टोपी 5 से 7 सैंटीमीटर मोती हो जाये तो इसे घुमाकर तोड़ लें| ये मशरूम भी ढिंगरी मशरूम की भाँती अच्छे से काफी ज्यादा पैदावार देती है| एक किलोग्राम सूखे भूसे से लगभग 1 किलोग्राम ताज़ा मशरूम पैदा होती है यानी इसकी उत्पादकता 100 प्रतिशत तक होती है|

आमदनी

1 किलोग्राम दूधिया मशरूम पैदा करने के लिए 30-35 रुपए का खर्च आता है और बाज़ार में यह 100-110 रुपए के भाव से बिकती है| इस प्रकार प्रति किलोग्राम में 70 से 80 रुपए तक लाभ हो सकता है|

3. कृषि क्षेत्र में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी

जगदीश कुमार, प्रोग्राम अस्सिटेंट (कंप्यूटर)
कृषि विज्ञान केंद्र रिआसी, शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय जम्मू
jagdishkkvk@gmail.com

प्रस्तावना

आज कल के दौर में शायद ही कोई क्षेत्र हो जो सूचना प्रौद्योगिकी से अछूता हो। सूचना प्रौद्योगिकी यानी इनफार्मेशन टेक्नोलॉजी एक तकनीकी क्षेत्र है, जिसमे कंप्यूटर विद्युतीय उपकरणों उपकरणों का उपयोग, जानकारी या सूचनाओं का आदान प्रदान करने, डाटा संग्रह, परिवर्तन, प्रसार आदि के लिए किया जाता है। इंसान ने इसका उपयोग लगभग हर क्षेत्र में अपनी सहूलियत के लिया किया है और लाभ प्राप्त किया है। कृषि क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा है कारण इस क्षेत्र क्षेत्र में सूचना के प्रसार एवं विस्तार का अत्यधिक महत्व है, इसीलिए हम यहाँ आईटी को आईसीटी(ICT) नाम से भी जानते है, जिसे ई-कृषि भी कहा जाता है, यानि सूचना और संचार प्रक्रियाओं के माध्यम से कृषि और ग्रामीण विकास को बढ़ावा देना और परोक्ष रूप से किसानो के जीवन में विकास, आय में बृद्धि और जीवन स्तर बेहतर एवं आसान बनाना है। इस अध्याय में हम कृषि क्षेत्र में आईसीटी(ICT) की भागीदारी, इसका प्रभाव, फायदे, नुकसान, समस्यांए, भविष्य की रूपरेखा आदि पर प्रकाश डालेंगे।

आईसीटी टूल्स/उपकरण

कम्प्यूटर्स, लैपटॉप, मोबाइल फ़ोन्स, टीवी, रेडियो, इंटरनेट, कॉल सेंटर, इनफार्मेशन किओस्कस आदि कईं प्रकार के उपकरण है जो कृषि क्षेत्र में उपयोगी साबित हुए है और एक्सपर्ट सिस्टम्स, इंटरैक्टिव वौइस् रिकग्निशन सर्विस(IVRS), जीपीएस, GIS, **इ-कंसल्टिंग, इ- लर्निंग, एग्रीक्लीनिंक कुछ नयी तकनीक है जो की बहुत ही उपयोगी है पर हर किसान की पहुँच से अभी दूर है।**

आईसीटी क्यों?

1. कृषि वातावरण, जलवायु , समयोचित निर्णय लेने के लिहाज़ से बहुत ही संवेदनशील क्षेत्र है। देर से मिली जानकारी चाहे वह मौसम की हो या सही बीज अथवा कीटनाशक छिड़काव की, बहुत ही नुकसान देय हो सकती है। भारत देश में जहाँ ८२ % किसान छोटे व मार्जिनल है यह नुकसान बहुत ही असहनीय हो सकता है।
2. विकसित देशो की तुलना में भारत जैसे विकासशील देशों में कृषि निर्भर आय बहुत ही कम है और यही कारण है कि अधिकतर किसान गरीब हैं। समय की मांग है कि कृषि एवं किसान की उन्नति की तरफ गंभीरता से विचार किया जाए और किसानो की आय बढ़ाई जाएऔर यह तभी संभव है जब सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल अधिक से अधिक किया जाए।
3. कृषि आधारित अनुसन्धान/अन्वेषण तब तक कारगर नहीं है जब तक वह किसान की खेतों तक सही समय में न पहुँच जाये। भारत में विस्तार कर्मी और किसानों के अनुपात को और कृषि का

विशाल क्षेत्र को देखते हुए ।CT क़े बिना यह अस्मभव ही नहीं नामुमकिन है। विपणन भी दो तरफ़ा प्रक्रिया है और बिना ।CT क़े यह भी संभव नहीं।

उपयोग/फायदे

1. अग्रिम मौसम को बारे में जानकारी से
    a. समय पर बुआई , रोपाई**।**
    b. सावधानियां और जरुरी कार्यवाही**।**
    c. सही बीज किस्मों का चयन।
    d. फसल कटाई की सावधानी।

    वास्तविक समय पर मूल्य निर्धारण एवं जानकारी।

. ऑनलाइन मंडीयों का आपस में संपर्क से उत्पाद की सही जगह अनुसार मूल्य की जानकारी।

a. ऑनलाइन उत्पाद की बोली लगाना।

b. उत्पाद का एक्सपर्ट सिस्टम द्वारा पूर्वानुमान।

सरकारी योजनाओं क़े बारे में सही जानकारी का किसानों तक पुहंचना। इसके क्रियान्वन और सबंधित विभाग की जानकारी।

ऑनलाइन एग्रीफिनांस , एग्रीबिजनेस , एग्रीक्लीनिंक।

GIS द्वारा एक बड़े क्षेत्र में फसलों की बीमारी का समय पर पता चल जाना और सही समय पर जरुरी कीटनाशकों/दवाइयों का छिड़काव।

किसान मोबाइल से फसल का फोटो वैज्ञानिक को भेजकर घर बैठे किसी बीमारी एवं कमी का समाधान प्राप्त कर सकतें है। एक्सपर्ट सिस्टम्स भी इस दिशा में उपयोगी साबित हो रहे है।

हाथ कंगन को आरसी क्या , हाल ही में कोरोना काल में ।CT कितनी उपयोगी साबित हुई यह प्रत्यक्ष सबने देखा।

कुछ प्रतिकूल तथ्य

1. किसानो में शिक्षा के स्तर की कमी होना।
2. जब तक आंतरिक इच्छा व प्रेरणा की कमी होगी इसका उपयोग लाभदायक नहीं होगा।
3. भारत में कुछ ऐसे इलाके अभी भी हैं जैसे पर्वतीय क्षेत्र जहाँ इंटरनेट की सुविधा नहीं है।
4. अधिकतर किसानो की आर्थिक स्थिति आज भी अच्छी नहीं है और महंगे मोबाइल फ़ोन्स या अन्य यंत्र ।CT अपनाने में बाधक है।

इस बात में कोई शंका नहीं की ।CT **का इस्तेमाल कृषि की उन्नति एवं किसानो की तरक्की क़े लिए अत्यधिक आवश्यक है पर क्या इसका पचार प्रसार सही मायने में उतना हो पाया है जितना होना चाहिए। कई पत्रिकाएँ व् पत्रों की समीक्षा से यह अनुमान लगाया जा सकता है की अभी इस दिशा में बहुत कुछ प्राप्त करना बाकी है। जगदीश कुमार व अन्य (**2021**) ने जम्मू कश्मीर में विस्तार अधिकारीयों द्वारा कृषि मोबाइल एप्प्स क़े इस्तेमाल पर एक शोध्पत्र में यह स्पस्ट किया है कि पर्वतीय क्षेत्रों में अभी भी इंटरनेट की पहुँच की समस्या है और यही नहीं, विस्तार अधिकारीयों में कृषि मोबाइल एप्प्स क़े इस्तेमाल क़े प्रति उदासी देखने को मिली और शायद ईसी प्रेरणा की कमी क़े कारण किसान**

भी ICT **का भरपूर फायदा लेने में नाकाम रहे। दास व अन्य** (2020**) ने मोबाइल फ़ोन्स पर कृषि जानकारी प्राप्त करने के प्रति, किसानों की अनुभूति का अध्यन किया और सिफारिश की कि किसानो की क्षमता निर्माण/विकास के लिए** ICT **का उपयोग अत्यंत आवश्यक है। किसानो के जीवन को बदलने हेतु कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा प्रशिक्षण, खेतों व** ICT **प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन प्रभावी प्रणालो है (शर्मा व अन्य, 2020). बडाया अ क एवं अन्य (2018) को अनुसार किसी तकनीक का प्रसार व विस्तार की उपयोगीता इस बात पर निर्भर करती है कि किसानो की सामाजिक व आर्थिक स्थिति क्या है। जगदीश कुमार व पवन शर्मा (2018) के अनुसार युवाओं में कृषि के प्रति रुज़हान कम है और न ही कृषि क्षेत्र में** iCT **टूल्स व उप्योगिता की जानकारी है। यह भविष्य में कृषि के प्रति अच्छे रुज़हान नहीं है।**

शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय जम्मू द्वारा ICT को बढ़ावा देने के लिए उठाये गए कदम

1. एन्त्रेप्रेंयूर्शिप/उद्यमी सोच को बढ़ावा देने के लिए विश्विद्यालय स्तर पर और कृषि विज्ञानं केंद्रों के स्तर पर विशेष परीक्षणों का आयोजन।
2. विभिन परोयजनाओं में युवाओं को कृषि एक रोज़गार के रूप में करने पर ज़ोर।
3. युवाओ को कम्प्यूटर्स व इंटरनेट इस्तेमाल करने का प्रशिक्षण देना।
4. स्टार्टअप इन एग्रीबिजनेस की विशेष ट्रेनिंग्स।
5. लगभग हर रोज किसान वाणी व FM रेडिओ पर स्कास्ट के वैज्ञानिकों के द्वारा कृषि सम्बन्धी जानकारी देना।
6. GIS के द्वारा सॉइल मैप/सैंपलिंग पर ज़ोर।
7. SMS और वाहट्सएप्प के द्वारा मौसम की जानकारी नियमित रूप से किसानो को भेजना।
8. मौसम एडवाइजरी का नियमित भेजना।
9. अन्य कृषि सम्बन्धी विभागों के क्षेत्र पधादिकारिओं को ICT का परीक्षण।
10. किसान कॉल सेंटर स्थापित किया गया।
11. विश्विद्यालय द्वारा किसानो के लिए विभिन्न मोबाइल एप्स बनाई गई है और कृषि मोबाइल एप्प्स के इस्तेमाल पर ज़ोर दिया जाता है।

निष्कर्ष

यह देखने में आया है कि आधुनिक तकनीक का शोद , प्रचार व प्रसार और अंत में अपनाने/इस्तेमाल के लिए ICT **का प्रयोग अति आवश्यक है पर सही मायने में ये जरूरतमंद किसानों तक पहुंचे इसके लिए कुछ सुझाव इस प्रकार है** :-

1. विस्तार कर्मियों को हर नयी तकनीकों व हर कृषि एप्प की सही जानकारी और परीक्षण देना जरुरी हो।
2. इंटरनेट सर्विसेज खासकर ग्रामीण इलाकों में सुदृढ़ हो।
3. इंटरनेट डाटा पैक किसानो के लिए किफायती दरों पर उपलभ्द हो।
4. किसानो को कप्यूटर इंटरनेट सर्फिंग का प्रशिक्षण दिया जाये।
5. नयी तकनीकों जैसे GIS , जीपीएस , एक्सपर्ट सिस्टम, IOT , ड्रोन द्वारा निगरानी , आर्टिफीसियल इंटेलिजेंस , रोबोटिक्स , बिग डाटा एनालिसिस आदि।
1. उत्पाद के सही दाम समय पर मिले इसके लिए ऑनलाइन मंडियों का रियल टाइम डाटा हर छोटे बड़े मोबाइल फ़ोन्स या वौइस् के द्वारा पहुँचाया जाए।
2. हर पंचायत को इंटरनेट से जोड़ा जाए।
3. पर्वतीय क्षेत्रों में नकदी फसलों को बढ़ावा दिया जाए और मार्केटिंग के लिए विशेष सुविधा प्रदान के जाये जिसके लिए ICT टूल्स कि मदद ली जाय।
4. जैविक खेती की जागरूकता पर जोर तथा मार्किट प्रदान करना।
5. GIS द्वारा साइल सैंपलिंग कर मिटटी की गुवत्ता में सुधार।
6. स्थानीय परिस्थितिओं के अनुरूप एक्सपर्ट सिस्टम का विकास।
7. नैनो तकनीक का विकास प्रसार व् प्रचार।
8. कृषि को ICT तकनीक के द्वारा आसान , फायदेमंद , आकर्षक बनाना।

संदर्भ

- *बडाया अ क एवं अन्य (२०१८) "असेसमेंट ऑफ़ मोबाइल एडवाइजरी सर्विसेज फॉर इम्प्रोविंग एग्रीकल्चरल लाइवलीहुड ऑफ़ फार्मर्स इन ट्राइबल डोमिनेटेड डिस्ट्रिक्ट ऑफ़ मध्य प्रदेश", जर्नल ऑफ़ कृषि विज्ञानं 2018, 6(2) : 1-६*
- *दास, U.; P. गोस्वामी एंड V.L.V. कामेश्वरी . २०२० . फार्मर्स प रसेप्शन ऑन उसे ऑफ़ मोबाइल फ़ोन्स फॉर एग्रीकल्चरल इनफार्मेशन . जर्नल ऑफ़ कम्युनिटी मोबिलाइजेशन एंड सस्टेनेबल डेवलपमेंट, 15(1): 155-159.*
- *जगदीश कुमार व अन्य (२०२१), 'यूसेज ऑफ़ फार्मिंग मोबाइल एप बी फील्ड फ़ंक्शनेरिएस ऑफ़ जम्मू एंड कश्मीर', जर्नल ऑफ़ कम्युनिटी मोबिलाइजेशन एंड सस्टेनेबल डेवलपमेंट, Vol. १६(३), सितम्बर-दिसंबर २०२१, ८५२-८६०*
- *जगदीश कुमार व पवन शर्मा (२०१८) " यूथ्स' परसेप्शन अबाउट फार्मिंग एंड एक्सटेंट ऑफ़ ICT एप्लीकेशन फॉर एग्रीकल्चरल परपोसेस", Bioved, 29(2) : 259–264, 2018*
- *शर्मा , प क .; प . वाली ; प . कुमार ; र . शर्मा ; र . सिंह एंड व् .प . चहल . २०२० . इकोनॉमिक्स ऑफ़ डेमोंस्ट्रेटिंग वीट प्रोडक्शन टेक्नोलॉजी अंडर रेन -फेड एसोसिस्टम्स .एग्रीकल्चरल इकोनॉमिक्स रिसर्च रिव्यु , 33: 109-118*

4. मधुमक्खी पालन का आरम्भ कब और कैसे करें

मधुमक्खियों का आधुनिक छत्तों में पालन और उनकी जरूरत से ज्यादा बचे हुए शहद के निकालने को मधुमक्खी पालन कहते हैं। कमेरी मधुमक्खियाँ विभिन्न प्रकार के फूलों से अमृत संचित करके शहद बनाती हैं। मधुमक्खियाँ विभिन्न मौसमों में और विभिन्न स्थानांे से शहद कैसे एकत्रित करती हैं मधुमक्खी पालक के लिए ये जानना अत्यन्त आवश्यक होता है। इन सभी बातों का ज्ञान होने से मधुमक्खी पालक को किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता।

आरम्भिक मधुमक्खी पालक के लिए जरूरी बातें

आरम्भ में मधुमक्खी पालक को चार या पाँच मधुमक्खियों के बक्से रखने चाहिये। इससे मधुमक्खी पालक अपनी जरूरतों के लिए काफी शहद निकाल सकता है। मधुमक्खियों का पालन व्यवसाय के रूप में बड़े पैमाने पर हो सकता है लेकिन अच्छा यही रहता है कि शुरू में छोटे पैमाने पर ही काम किया जाए।

एक सफल मधुमक्खी पालक बनने के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि मधुमक्खियों की जरूरतों और उनके व्यवहार के बारे में पूरा ज्ञान होना चाहिए किसी को मधुमक्खियों के साथ काम करते हुए देखकर भी मधुमक्खी पालन सीखा जा सकता है। मधुमक्खियों को कई प्रकार की कठिनाइयों, बीमारियों और दुश्मनों का सामना करना पड़ता है। इसलिए मधुमक्खी पालक को उनकी कठिनाइयों को दूर करना और उनकी जरूरतों का पूरा अत्यन्त आवश्यक है।

मधुमक्खी पालन कैसे शुरू करें

मधुमक्खी पालन शुरू करने से पहले निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है।

1. मधुमक्खी पालन शुरू करने से पहले, मधुमक्खियों की आदतों, जरूरतों और उनकी विशेष जानकारी होनी चाहिए।
2. किसी सफल मधुमक्खी पालक के साथ काम करने पर भी मधुमक्खी पालन सीखा जा सकता है।
3. मधुमक्खी पालन सम्बन्धी सिखलाई पाठ पढ़ना चाहिए और पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।
4. आरम्भ में कुछ मधुमक्खियों के छत्तों से व्यवसाय शुरू करें और धीरे-धीरे अनुभव ग्रहण करने पर उनकी संख्या बढ़ाऐं।
5. मधुमक्खियों के छत्ते मधुमक्खी पालकों से या दूसरी संस्थाओं से खरीदे जा सकते हैं।

मधुमक्खी पालन कब शुरू करें

यों तो मधुमक्खी पालन किसी भी मौसम में और वर्ष के किसी भी समय शुरू किया जा सकता है लेकिन यह हमेशा अच्छा रहता है कि मधुमक्खी पालन बसन्त ऋतु में शुरू किया

जाए क्योंकि इस मौसम में अमृत और पराग पैदा करने वाले पौधों की संख्या अधिक होती है। हालांकि विभिन्न स्थानों पर जलवायु तथा वनस्पति अलग होती है इसलिए मधुमक्खी पालन के लिए उचित समय हर स्थान पर अलग होता है इसलिए यह हमेशा उचित रहता है कि मधुमक्खी पालन तब शुरू किया जाये जब अमृत और पराग देने वाले फूल काफी मात्रा में उपलब्ध हों। मैदानी इलाकों में सितम्बर-अक्टूबर के बाद कभी भी मधुमक्खी पालन शुरू किया जा सकता है, जब मधुमक्खियों की बढ़ोत्तरी के लिए सर्दियों में काफी फूल उपलब्ध होते हैं। गर्मियों में कालोनियों को अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है फूलों का अभाव होता है और गर्मी की अधिकता से मधुमक्खियाँ मर जाती हैं इसलिए मधुमक्खी पालक को मधुमक्खियों की जरूरतों और पालन पोषण का पूरा ज्ञान होना चाहिए।

मधुमक्खी पालन कहाँ करें

कोई भी ऐसा स्थान जहाँ अमृत और पराग पैदा करने वाले पौधे काफी देर तक मिलने की सम्भावना हो मधुमक्खी पालन के लिए उचित माना जाता है। ऐसा स्थान चयन करना चाहिए जहाँ अपनी जरूरतों के अलावा मधुमक्खियाँ अधिक शहद जमा कर सकें ताकि शहद मधुमक्खी पालक को भी मिल सके। इसलिए मधुमक्खी पालन के लिए भोजन देने वाले पौधों का सही ज्ञान होना चाहिए। व्यवसायक मधुमक्खी पालक एक से ज्यादा शहद की फसल प्राप्त प्राप्त करने के लिए मधुमक्खियों को स्थानान्तरित करते रहते हैं। अधिकतर लोग सोचते हैं कि बगीचे में थोड़े फूल उगाने से उन्हें शहद मिल जाएगा। लेकिन ध्यान रहे मधुमक्खी सभी फूलों पर नहीं जाती है। यह उन्हीं फूलों पर जाती है जिससे इनको पर्याप्त मात्रा में मकरंद तथा पराग मिलता है। इसलिए यह जरूरी है कि मधुमक्खी पालन के लिए उस स्थान का चयन करना चाहिए जिसके चारों ओर एक या दो किलोमीटर के दायरे में मधुमक्खी पौधे पाये जायें। मधुमक्खी के लिए कुछ मुख्य पौधें निम्न हैं:- अमरूद, लीची, नींबू जाति, नाशपाती, सेब, इमली, जामुन, खजूर, केला, नारियल, सरसों, राई, तारामीरा, तिल, अरहर, मक्का, ज्वार, बाजरा, गोभी, मूली, खीरा, ककड़ी, घीया, तोरई, धनिया, सौंफ, करजं, तुन, नीम, ताड़, युकेलिप्टस 'सफेदा', पापी, स्वीट पी, कार्न-फ्लावर, एन्टीगोनैन, डहेलिया, गुलाब, आदि। इसके अलावा हजारों जंगली पौधे, जड़ी-बूटियाँ भी हैं, जिनमें मधुमक्खियों को भोजन मिलता है।

मधुमक्खी पालन के लिए सही स्थान का चयन

मधुमक्खी छत्तों को जिस स्थान पर स्थापित किया जाये वह जगह ऐसी होनी चाहिए कि मधुमक्खियों को कोई असुविधा न हो। मधुमक्खी छत्तों को बगीचों में पेड़ों के नीचे छाया में रखा जा सकता है। ऐसा करने से उनका धूप से भी बचाव होता है। उत्तरी भारत में जाड़े में अगर कालोनियों को खुले स्थान में धूप में रखा जाये तो ज्यादा अच्छा रहता है। मधुमक्खियों के छत्तों को हमेशा ऐसी जगह रखें जहाँ उनसे ज्यादा छेड़छाड़ न हो। सड़क के

किनारे मधुमक्खियों के छत्तों को न रखें इससे मधुमक्खियाँ आने-जाने वाली गाड़ियों से पटक कर मर जाती हैं। गीली जगह जहाँ पानी इकट्ठा रहता और कीचड़ हो जाता है मधुमक्खियों के छत्तों को रखना उचित नहीं है ऐसे स्थानों पर मधुमक्खियाँ अपने छत्ते का तापमान बनाये रखने में अक्षम रहती हैं। बगीचे में कालोनियों को रखने से आँधी तूफान से भी उनका बचाव रहता है। जहाँ मौनालय स्थापित करना हो ध्यान रखें कि आसपास साफ पानी उपलब्ध होना चाहिए। अगर कुदरती जल स्त्रोत उपलब्ध नहीं है तो खुद पानी देने की व्यवस्था करें। जिस जगह का चयन किया जाये वह सड़क से बहुत अधिक दूर भी नहीं होनी चाहिए तथा सारा साल शुष्क रहना चाहिए। लेकिन यह स्थान सड़क के बहुत नजदीक भी नहीं होना चाहिए। खेतों या चरागाहों में जहाँ आसपास पशु चरते रहते हैं मौनालय स्थापित करने के लिए उचित नहीं है क्योंकि पशु छत्तों को उलट-पलट सकते हैं और उनको मक्खियाँ डंक भी मार सकती हैं।

मौनालय में सुबह और बाद दोपहर कुछ धूप भी आनी चाहिए और दिन में जब ज्यादा गर्मी हो जाये तो कुछ साया भी मिल सके। छत्तों को जमीन से 6 इंच से 12 इंच तक ऊँची चौकी पर रखें और छत्ते के बीच कम से कम 6 से 10 फुट का फासला रखें। प्रवेश द्वार की तरफ से छत्ता एक इंच नीचे की ओर झुका हुआ और दूसरी तरफ से एक इंच ऊपर को उठा होना चाहिए। ऐसा करने से छत्ते के अन्दर बारिश का पानी जमा नहीं रहता। छत्तों को ऐसे कतारों में रखे कि मधुमक्खी पालक को हर बार उनके आगे से नहीं गुजरना पड़े। अगर हो सके तो छत्तों को पूर्व दिशा की ओर रखें। छत्ते के नीचे रखी चौकी की टांगों को पानी भरी हुई कटोरियों में रखें ताकि चीटियां अन्दर प्रवेश न कर सकें। अगर छत्तों को कतारों में रखा गया है तो दो कतारों के बीच 12 फुट से कम फासला न रखें। इससे मधुमक्खियाँ गलत छत्तों में नहीं घुसती और लूटपाट की सम्भावनायें भी कम हो जाती हैं और न ही बीमारियाँ फैलने का डर रहता है।

मौनालय में मौनागृह की संख्या

मधुमक्खी पालन में इस बात का ध्यान रखना बहुत जरूरी है कि किसी एक जगह पर कितनी मधुमक्खियों की पेटियों को रखा जाये। जैसा की हमें ज्ञात है कि मधुमक्खियाँ मौनालय से 1 या 2 कि.मी. के दायरे में फूलों से अपनी भोजन संचित करती हैं अगर एक ही जगह बहुत ज्यादा कालोनियों को रख दिया जाएगा तो शहद उत्पादन बहुत कम हो जाएगा। ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाने के लिए यह जरूरी है कि दो मौनालयों के बीच कम से कम 1 कि.मी. का फासला हो। एक मौनालय में 50 मौनगृहों से ज्यादा नहीं रखने चाहिए अन्यथा लूटपाट और एक छत्ते से दूसरे छत्ते में मधुमक्खियों के जाने की सम्भावनायें अधिक रहेंगी।

मौनालय में छत्तों का क्रम या रचना

मधुमक्खी पालन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि मधुमक्खियों के बक्से मौनालय में किस क्रम से रखे गये हैं। छत्तों को छाया में रखे लेकिन अधिक समय तक छाया रहना भी ज्यादा लाभदायक नहीं है। सुबह और शाम को मधुमक्खियों को धूप मिलना आवश्यक है किन्तु दिन की तपतपाती गर्मी से बचाव जरूरी है। अगर आसपास पेड़ नहीं हो तो लकड़ी के तख्ते वगैरा लगाकर छाया का प्रबन्ध करना चाहिए। मधुमक्खी पालक को ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि ठण्डी हवा सीधी छत्तों के प्रवेश द्वार से न टकराये। झाड़ी की बाड़ और मकान या दीवार वगैरा का होना इस काम के लिए लाभदायक है। अगर ऐसा न हो सके तो लकड़ी के तख्तो को आपस में जोड़कर मौनालय के सामने खड़ा कर दें। लेकिन ध्यान रखें कि दो तख्तों के बीच एक या दो इंच का अन्तर रखा जाए ताकि इन सुराखों में से हवा निकल सके और यह तख्ते हवा के तेज दबाव से उड़ न जायें।

अगर मौनालय शहर के आसपास स्थापित करना हो तो ध्यान रखें यह किसी गली, सड़क या पैदल आने-जाने वालों के रास्ते के पास न हों। पशुओं का भी आसपास होना अच्छा नहीं रहता जब भी वे अपनी दुम को हिलायेंगे ज्यादा से ज्यादा डंक लगने की संभावना रहती है। छत्तों को कतार में तीन और चार फुट के फासले पर रखा जाना चाहिए। दो कतारों के बीच कम से कम 12 फुट का फासला रखना आवश्यक है। दो, तीन और चार छत्तों को झुण्ड में भी रखा जा सकता है लेकिन प्रवेश द्वार एक दुसरे से उल्टी दिशा में हाने चाहिए तथा दो समूहों के बीच में काफी दूरी हो। अगर प्रवेश द्वार भी भिन्न-भिन्न दिशाओं में होने चाहिए तथा दो समूहों के बीच में काफी दूी हो। अगर प्रवेश द्वार भी भिन्न-भिन्न दिशाओं में सम्भव सम्भव न हो सके तो मौनगृहों को भिन्न-भिन्न रंगों के रंग कर उनमें अन्तर कर देना चाहिए। मौनों को रंग की पहचान होती है। वे रंगों से अपने मौनगृह को पहचान लेती हैं। अगर प्रत्येक समूह को किसी झाड़ी या किसी पेड़ के पास रखा जाये तो और भी उत्तम होता है। इससे भी मौनों को अपना मौनगृह खोजने में सरलता होती है।

मौनगृह सीड़ीनुमा खेतों में भी रखे जा सकते हैं। यूरोप में तो मौनगृहों का रखने के लिए पक्के मकान भी बनाये जाते हैं। चारों ओर बाहर से तख्तों, पत्थरों या ईंटों की पक्की दीवार होती है और भीतर मौनगृह बाहर को मुँह करके, दो-तीन कतारों में रख दिये जाते हैं।

छत्तों का समूह बहुत अधिक घना नहीं होना चाहिए। इससे मधुमक्खियाँ भटककर इधर-उधर छत्ते में घुस जाती हैं। ऐसी स्थिति में कभी-कभी रानी मक्खी का भटकना बड़ा हानिकारक रहता है। रानी मक्खी जब संभोग के लिए उड़ान भरती है और लौटकर अगर गलत छत्ते में घुस जाये तो उस छत्ते की मधुमक्खियाँ इसे मार देती हैं। मौनगृहों को सीधा जमीन पर न रखें। हमेशा छत्तों को चौकी पर ही रखें। मौनगृहों के आसपास घास फूस और खरपतवार वगैरा उखाड़ देनी चाहिए ताकि मक्खियों को आने जाने में कोई रूकावट न हो। मौनालय के चारों तरफ कांटेदार तार लगा दें ताकि पशु और बच्चे वगैरा छत्तों से छेड़छाड़ न कर सकें।

कृषि उत्पादन में मधुमक्खियों का योगदान

मधुमक्खियों से केवल शहद ही नहीं मिलता बल्कि अनेक फसलों में मधुमक्खियाँ परागण का माध्यम बनकर कृषि उत्पादन बढ़ाती हैं। मधुमक्खी पालकों का अनुभव है कि फसलों पर मधुमक्खियों के बैठने से पैदावार में निश्चित रूप से बढ़ोत्तरी होती है। जिन स्थानों स्थानों पर मधुमक्खी पालन किया जाता है उसके एक मील के घेरे में फसल की आम हालत अन्य स्थानों से अच्छी रहती है। यद्यपि कीटनाशक दवाइयों का घातक प्रभाव भी मधुमक्खियों पर पड़ता है।

देश में करीब 20 फीसदी भाग में जंगल हैं। यहाँ लगभग ढ़ाई करोड़ लोग रहते हैं। इन्हें मधुमक्खी पालन उद्योग में आसानी से लगाया जा सकता है। इसमें अधिक लागत नहीं आती आती और साधारण वर्ग के लोग भी अपना सकते हैं। भारत के बहुत से भागों में खेती के साथ किये गये इस धन्धे में आशातीत लाभ मिला है।

यह तो सभी जानते हैं कि हमारी खेती पूरे साल भर का धन्धा नहीं दे सकती। खेती के साथ-साथ ग्रामोद्योगों का तालमेल होना बहुत जरूरी है। एक समय था मात्र शहद के लिए या या शौक के लिए मधुमक्खी पालनन किया जाता था। बाद में इसे कुटीर उद्योग का रूप मिला मिला पर अब आवश्यकता इस बात की है कि इसे कृषि अथवा उद्यान विज्ञान का क्रियाशील सहयोगी माना जाए।

मधुमक्खी पालन का अर्थ हमारे देश में लोग शहद या मोम के उत्पादन से लेते हैं जबकि दूसरे देशों में मधुमक्खियों से शहद, मोम प्राप्ति के साथ-साथ खेती, फूलों की पैदावार बढ़ाने और उनके संकर परागण पर जोर दिया जाता है। इसमें कोई शक नहीं कि मधुमक्खी बाग-बगीचों और खेतों में खड़े वृक्षों और पौधों को फैलाने में और उनका परागण करने में अनंत मजदूरों का काम करती हैं। परागधान कराने पर तिलहनों, दालों, सब्जियों और कपास के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। मधुमक्खियाँ केवल फल-फूल वाले पौधों में ही संकर परागण नहीं करती वरन् वे प्रायः सभी फलदायी वृक्षों से सम्बन्ध रखती हैं। जहाँ फल-फूलों की अधिकता होती है वहाँ का शहद मीठा होता है। एक अनुमान के अनुसार अगर मधु के रूप में एक रूपये का लाभ होता है तो कृषि उत्पादन से किसानों का 20 गुणा से भी अधिक लाभ होता है। परागण से सिर्फ पैदावार ही नहीं बढ़ती बल्कि उम्दा किस्म के बीज और फल तैयार होते हैं। फलों और बीज-फसलों के लिए आवश्यक पराग संक्रमण कार्य 80 प्रतिशत से अधिक मधुमक्खियों द्वारा ही होता है।

अनेक फसलों की सफलतापूर्वक परागण सेवा के लिए पौधे में फूल लगने पर प्रति एकड़ एक से तीन मधु उपनिवेश 'छत्ता' रखने की आवश्यकता होती है। जितने अधिक छत्ते होंगे उतनी ही अच्छी फसल होगी, कभी-कभी पैदावार दुगनी-तिगुनी और यहाँ तक ही पाँच गुनी तक होगी। अभी तक परागण के लिए मधुमक्खी के स्थान पर यंत्रों का प्रयोग नहीं हुआ है।

प्रत्येक मधुमक्खी का मधु छत्ता एक कारखाने की तरह है जिसमें इच्छुक और बिना परिश्रमिक के हजारों मधुमक्खियाँ श्रमिक स्वरूप कार्य-व्यस्त होती हैं। उन्हें छुट्टी, हड़ताल,

तालाबंदी, आठ घंटे कार्य, श्रमिक संघ, निर्वाचन अदालत के बारे में कोई ज्ञान नहीं है। उन्हें तो मतलब है सिर्फ कार्य करने से। मधुमक्खी पालन के आधुनिक तरीके से उनकी हालत सुधारी जा सकती है और उनकी मधु के रूप से बहुत अच्छे खाद्य उत्पादक तथा अच्छे फल, मूंगफली और बीज जोकि राष्ट्र के लिए बहुत मूल्यवान हैं, उत्पादन में इस्तेमाल कर सकते हैं। यद्यपि मधुमक्खी पालन बहुत पुराना उद्योग है परन्तु अधिक उत्पादन के लिए ऐसे प्रयत्न प्रयत्न किये जा रहे हैं कि मधुमक्खियाँ ज्यादा से ज्यादा शहद का उत्पादन कर सकें। परागण परागण की क्रिया को ठंड़े देशों में अब अधिक महत्व दिया जा रहा है, क्योंकि सर्दी में कीड़ों की संख्या कम हो जाती है। परागण मुख्यतः दो प्रकार का होता है। 1. स्वः परागण, 2. पर-परागण। डॉ. जी.बी. देवडीकर के अनुसार बहुत से तिलहनांे में स्वपरागण की तुलना में पर-परागण से 120 प्रतिशत वृद्धि पाई गई है। पर-परागण के सबसे महत्वपूर्ण साधन हैं कीट मधुमक्खी। वैज्ञानिकों को आकर्षित करने के लिए यह पौधे क्या-क्या उपाय नहीं करते। कभी तो मकड़ी के रंग, कभी मकरंद से भरपूर। सैलविया का पौधा मधुमक्खी परागित पौधों में अत्यन्त प्रिय है।

सुव्यवस्थित मधुवाटिका किसी देश के खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। जैसा की पहले बताया गया है कि मधु के उत्पादन में महत्वपूर्ण कार्य के अतिरिक्त मधुमक्खियाँ पराग संक्रमण मक्खियों की भूमिका अदा करती हैं कहा जाता है कि मधुमक्खियाँ शहद उत्पादन द्वारा जहाँ एक रूपया देती हैं, वे फल उत्पादक को 15 से 20 रूपये तक के अधिक फल के उत्पादन में सहायता करती हैं।

सुसंगठित आधार पर मधु तथा मोम का उत्पादन बढ़ाने के लिए पंचायत क्षेत्रों में अधिक तेजी से बढ़ने वाले तथा अनावृष्टि के समय भी जीवित रहने वाले पौधों तथा वृक्षों को लगाकर मधुमक्खी चरागाह के सुधार एवं विकास कार्यक्रम के लघुकालीन तथा दीर्घकालीन योजनायें चलायी जा सकती हैं।

कुछ क्षेत्रों में चारे तथा उपयुक्त जाति के पौधों की कमी के कारण मधुमक्खियों के विकास में बाधाओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए मकरंद तथा पराग वाले पौधों का बढ़ाने के लिए अधिकतम प्रयास किए जाने चाहिए।

डार्विन ने फूलों और जीव-जन्तुओं के पारस्परिक संबंधों का गहरा अध्ययन किया था। इस विषय पर उन्होंने पुस्तक भी लिखी थी। उसके अनुसार कोई भी फूल उसी जीव को अपना प्रेमी चुनता है, जो उसके गर्भाधान में सहायक बनता है। इस कार्य में चींटियाँ और दूसरे प्रकार के कीट जहाँ असफल होते हैं वहाँ मधुमक्खियाँ, तितली, चमगादड़ और पक्षी सफल होते हैं। डार्विन ने इन्हीं सफलताओं के आधार पर मधुपुष्प, पतंग पुष्प और चमगादड़ पुष्प श्रेणियों में फूलों को विभाजित किया है।

मधुपुष्प खूब गहरे रंग के होते हैं - पीत, रक्ताभ, मखमल जैसे या नीले। इनकी गंध भी बड़ी मीठी होती है। इन फूलों से मधुमक्खियों को मधु मिलता है और वे रंगों के कारण ही उसकी ओर आकर्षित होती हैं। यह दिन के प्रकाश में उड़ती हैं क्योंकि मधुपुष्प दिन में ही

विकसित होते हैं और रात्रि में बन्द हो जाते हैं। मधुमक्खियों की आँखें होती हैं और यह आश्चर्यजनक प्राणशक्ति रखती हैं। ये दिनभर मधुपुष्पों से रस संचय करती हैं और रात्रि में अपने छत्तों में चली जाती हैं। इनकी जीभ बड़ी नुकीली और तेज होती है जिससे वे फूल के उस हिस्से मंे आसानी से भेद देती है, जहाँ मधु संचित रहता है और जहाँ दूसरे कीट प्रवेश नहीं पा सकते हैं। यहाँ पहुँकर मधुमक्खी अपने शरीर में अनजाने में ही एकत्रित पराग लपेट लेती है और वहाँ से उड़कर दूसरे फिर तीसरे, चौथे फलों से सम्बन्ध स्थापित करती है, जहाँ उसके शरीर में लिपटा पराग गिर जाता है और नया पराग चिपक जाता है।

इस प्रकार मधु फूलों की उन्नत किस्में की वृद्धि मधुमक्खी के सहारे होती है। संक्षेप में फूलों का गर्भाधान पराग द्वारा होता है। इस कार्य में मधुमक्खियाँ बहुत सहायक होती हैं। अगर फूल मात्रा हवा या प्रकाश के सहारे होते तो इनकी वृद्धि न होती। मुख्यतः ये मधुमक्खियाँ हैं जो फूल पैदा करती हैं। हाल ही में सूर्यमुखी के पौधे पर परागण क्रिया का सर्वेक्षण किया गया, जिसमें परिक्षणों के अनुसार स्वपरागित प्रति पौधे औसत उपज यहाँ कुल 786.08 बीजों में से सिर्फ 83.37 ही भरे-पूरे पाये गये, वहाँ मधुमक्खी परागित प्रति पौधे औसत उपज के कुल 1097.57 बीजों में से 739.85 बीज भरे-पूरे पाए गए। स्वपरागित और मधुमक्खी परागित भरे-पूरे बीजों के वजन की स्थिति भी क्रमशः 5.97 ग्राम एवं 46.06 ग्राम रही अर्थात् लगभग 675.4 प्रतिशत की वृद्धि। इसी तरह अन्य फसलों में स्वपरागण के मुकाबले मधुमक्खी परागण के परिणामस्वरूप सरसों में 131.63, रामतिल मंे 173.3, अलसी में 232.46, प्याज में 178.3, मूली में 705.79, धनिया में 186.89, अमरूद में 140.0 और कपास में 62.6 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस प्रकार शहद प्राप्ति के अलावा स्वयं कृषि कृषि उद्योग के लिए मधुमक्खी पालन की उपयोगिता स्पष्ट है। बहुत सी फसलें हैं जिनकी पैदावार में मधुमक्खियों के सेचन क्रिया को सम्भव करके, अद्वत रूप से बढ़ा दी जाती है।

फलः सेब, नाशपाती, शलगम, खुमानी, आलू-बुखारा, स्ट्राबेरी, चेरी, अंगूर, आम, लीची, लोकाट, बादाम, खरबूज, तरबूज, नारंगी, माल्टा, संतरा, नींबू, अमरूद आदि।
सब्जीः सेम, मूली, बन्दगोभी, शलगम, प्याज, कद्दू, टमाटर, चुकन्दर, बैंगन, मिर्च, गाजर, तुरई, लोकी, ककड़ी, पेठा, करेला, टिन्डा, भिण्डी, पालक, सलाद, मटर, खीरा आदि।
चारा व घासः बरसीम, कलोभर आदि।

अब हमारे देश में सूरजमुखी उत्पादन को खाद्यान्न तेल की आवश्यकता को देखते हुए बढ़ावा दिया जा रहा है। किन्तु हमारे देश में सूरजमुखी का उत्पादन रूप और पूर्वी यूरोपीय देशों की तुलना में बहुत कम है। इन देशों में सूरजमुखी में फूलते समय प्रति एकड़ एक-दो मधुमक्खी उपनिवेश रखने का प्रचलन है। सूरजमुखी पर-परागित फसल है अर्थात् इसमें आत्म अनुवर्रक फसलों में कुछ पवन परागित होती है। मधुमक्खी और दूसरे कीटों के स्वभाव में अन्तर है। दूसरे कीट एक जाति के फूल पर बैठने और उसका पराग लेने के बाद अन्य फूलों पर बैठ जाते हैं, जबकि मधुमक्खी अपने बार-बार के भ्रमण में एक ही जाति के फूलों

पर बैठत है। उसकी एक पुष्पीय निष्ठा एक विशेषता है और उसकी यह निष्ठा लम्बे समय तक तक रहती है। जब तक कि उस उपनिवेश के एक किलोमीटर के क्षेत्रों में फूलों की कमी न पड़ जाये। मधुमक्खी की विशेषता यह है कि यह समूह में ही रहना जानती है। वे तब तक अपना स्थान नहीं छोड़ती जब तक उन्हें कोई कष्ट न आये। आधुनिक मधुमक्खी पालन में स्थानान्तरण संभव है। इस प्रकार एक जगह से हटाकर उन्हें अन्यत्र ले जाया जा सकता है। यानि उनके लिए स्थान और फसल का समय हम तय कर सकते हैं।

पूना स्थित केन्द्रीय मधुमक्खी अनुसंधान संस्थान ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि पर-संसेचित फसल अथवा स्वयं बन्धया फसल के समीप मधुमक्खियों की जनसंख्या कृषि उत्पादन में वृद्धि करने में सहायक होती है और फलों की कोटि में भी सुधार करने में सहायक सिद्ध होती है। मधुमक्खियाँ फूलों से पुष्प्रासव और पुष्प-पराग के रूप में अपना भोजन प्राप्त करती हैं। इस प्रक्रिया में वे इधर-उधर परागों का छिड़काव करती हैं। यदि उनकी उनकी बस्तियों के समीप फूलों वाले विभिन्न पौधे विकसित हों तो स्वयंसेवक मधुमक्खियाँ उनमें से अधिक मीठे पुष्पों अथवा पौष्टिक गुणों वाले पौधों का चुनाव कर सकती हैं। मधुमक्खियों की प्रभावकारिता उनके आकार पर निर्भर करती है। भारत के वैज्ञानिकों ने मधुमक्खियों की प्रजातियाँ सुधारने में सफलता प्राप्त की है और वे अधिक लम्बी जिह्वा वाली वाली मधुमक्खियों का विकास करने में सफल रह हैं। बड़े आकार की मधुमक्खियाँ प्रति उड़ान में हर बार अधिक पुष्प्रासव और पुष्प पराग ढ़ो सकती हैं। बड़ेे आकार और लम्बी जिह्वा वाली मधुमक्खियाँ शहद का अधिक मात्रा में उत्पादन करने में भी सक्षम होती हैं। साथ ही अच्छी कोटि के पुष्प्रसव के चुनाव की भी उनमें अधिक योग्यता होती है। अतः वे श्रेष्ठ पदय संसेचन में समर्थ होती हैं। इसी प्रकार, अमेरिका में भी विशेष फूलों के संसेचन के लिए मधुमक्खियों की सुधरी हुई प्रजातियों का उपयोेग किया जा रहा है।

गर्म देश होने के कारण भारत में रोगांे और कीड़ों का अधिक प्रकोप होता है। इनसे कृषि और बागवानी फसलों को बहुत नुकसान पहुँचता है। कीड़ों से होने वाले नुकसान को कम करने के लिए कीटनाशक मुख्य हथियार हैं। कीटनाशी ऐसे रसायन हैं, जो हानिकारक जीवों को मारने या नियंत्रित करने के उपयोग में लाए जाते हैं। किसानों का नुकसान पहुँचाने वाले मुख्य जीव निम्न हैं - फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़े-मकौड़े, पौधों के रोगों को जन्म देने वाले कवक, जीवाणु, कृमि और विषाणु, पोषक तत्वों और नमी के लिए फसलों से प्रतिद्वंदिता करने वाले खरपतवार जो सिंचाई की नहरों में जलप्रवाह को भी रोकते हैं।

कीटनाशी जैविक रूप से सक्रिय रसायन है, जो अपने विषाक्त या हानिकारक प्रभाव के कारण हानिकारक जीवों को खत्म करते हैं। इसलिए वे मनुष्यों, पशुओं और परागणकर्ताओं पर भी गम्भीर प्रभाव छोड़ सकते हैं। यह वातावरण को, पीने के पानी व खाद्य पदार्थों को भी भी दूषित करते हैं। इसके अलावा कीटनाशी महंगे भी हैं। इसलिए कीटनाशियों को बहुत सावधानीपूर्वक इस्तेमाल करना चाहिए, जिससे इनसे अधिक लाभ मिल सके और न्यूनतम नुकसान हो। भारत में बढ़ती हुई आबादी के लिए अधिक से अधिक भोजन की जरूरत हो रही

है और फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़े-मकौड़ों को रोकने के लिए कीटनाशकों का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल हो रहा है। अगर कीटनाशकों का प्रयोग पूर्णतया बन्द तो नहीं हो सकता लेकिन कम तो किया जा सकता है।

मधुमक्खियों की विषाक्तता तीन प्रकार की होती है।

1. कीटनाशक दवाईयाँ, खरपतवार को खत्म करने वाली दवाईयाँ, जीवक दवाईयाँ।
2. जहरीले पौधे: कई पौधे ऐसे होते हैं जो जहरीले अमृत या पराग पैदा करते हैं। जिसको खाने से मधुमक्खियाँ मर जाती हैं।
3. कारखाने के जहरीले पदार्थ: कई कारखानों से ऐसे जहरीले पदार्थ और धुएं वगैरा निकलते हैं जो आसपास के क्षेत्रों में मधुमक्खियों का भोजन विषाक्त करके उन्हें मार देते हैं।

इन तीनों प्रकार की विषाक्तता से पहली प्रकार की विषाक्तता अधिक हानिकारक है। यदि यदि फसल फूल खिलने की अवस्था में नहीं है तो कीटनाशी का उपयोग बिना मधुमक्खियों को नुकसान पहुँचाए हो सकता है। लेकिन अगर फसल फूल खिलने की अवस्था में हो तो मधुमक्खियों को बचाने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए। मधुमक्खियों में विषाक्ता के कारण नीचे दिए गए हैं:-

1. कीटनाषकों का रूप: कीटनाशी धूल मधुमक्खियों को घोलकर छिड़काव की जाने वाले कीटनाशियों की तुलना में अधिक नुकसान पहुँचाते हैं क्योंकि धूल के कण वायुमण्डल में विलीन होकर दूसरे स्थानों में भी पहुँच जाते हैं। घुलनशील पाऊडर ज्यादा देर तक विषाक्त रहते हैं। कीटनाशी घोल पौधों के अन्दर जज्ब हो जाते हैं जब मधुमक्खियाँ ऐसे पौधों के स्पर्श में आती हैं तो विषाक्त हो जाती हैं।
2. छिड़काव काल: मधुमक्खियाँ अपने भोजन के लिए फूलों पर निर्भर रहती हैं इसलिए जब फसलों पर फूल खिले हों तो वे अमृत व पराग इकट्ठा करने के लिए जाती हैं। इसलिए जब भी मधुमक्खियाँ फूलों पर चक्कर लगा रहीं हो तो छिड़काव न करें।
3. छिड़काव का समय: मधुमक्खियाँ दिन के समय काफी सक्रिय होती हैं। कीटनाशकों का छिड़काव व भुरकाव भोर में या शाम को करना चाहिए, क्योंकि इस समय मधुमक्खियाँ सक्रिय नहीं होती।
4. कीटनाषियों की विषाक्तता: बहुत से कीटनाशी काफी समय तक विषाक्त रहते हैं, इनका छिड़काव चाहे शाम को किया जाए फिर भी हानिकारक सिद्ध होते हैं।
5. मौनगृहों का स्थापन या स्थान: मधुमक्खियाँ आमतौर पर 1 से 2 कि.मी. तक मौनालय से दूर तक जाकर अपना भोजन एकत्रित करती हैं। इसलिए 2 कि.मी. के दायरे तक कीटनाशकों का छिड़काव हानिकारक है।

विषाक्तता के लक्षण

मधुमक्खियाँ जब पौधों से भोजन एकत्रित करने जाती हैं तो पौधों के साथ स्पर्श में आने से विषाक्त हो जाती हैं। इसके अलावा अमृत व पराग, जिसके ऊपर कीटनाशकों का छिड़काव

हुआ हो, विषैले हो जाते हैं। सबसे पहले लक्षण इस बात से पता चलता है कि छत्ते के आसपास अचानक मरी हुई मधुमक्खियों के ढ़ेर लगे हुए होते हैं। (चित्र 59)।

कभी-कभी मधुमक्खियाँ छत्ते में पहुंचने से पहले, खेतों और छत्ते के बीच मर जाती हैं। कभी-कभी यह विषैले पदार्थ छत्ते में पहुंच जाने से बच्चों को और नवजात मक्खियों को भी खत्म कर देते हैं। कीटनाशक नीचे दिए गये तीन तरीकों से मधुमक्खियों को विषाक्त करके खत्म करते हैं -

1. सम्पर्क में आने से,
2. मेदे में विषाक्तता करने से, तथा
3. भाप।

सम्पर्क कीटनाशी शरीर की खाल के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं और मेदे में विषाक्तता करने वाले खाने की नली के साथ प्रवेश करके हाजमे में पहुंचकर नुकसान पहुंचाते हैं और भाप वाले सांस की नली के अन्दर घुसकर नुकसान पहुंचाते हैं। अगर किसी भी तरीके से कीटनाशी शरीर में घुस जाएं तो मधुमक्खियों में लकवा, सुधबुध खो जाना, अपने आप को संभाल नहीं पाना, टांगें, पंख और हाजमें का खराब हो जाना स्वभाविक बात है। ऐसा होने पर मधुमक्खियाँ अपने आप भोजन भी नहीं कर सकती और धीरे-धीरे मर जाती हैं। कुछ आम लक्षण नीचे दिए गये हैं-

1. मधुमक्खियों को लकवा हो जाता है। अच्छी तरह उड़ नहीं सकती और हाजमा खराब हो जाता है। शरीर का हिलना-ढुलना कुछ अटपटा सा हो जाता है।
2. उदर फैल जाता है।
3. अधिकतर मक्खियाँ चिड़चिड़ी हो जाती है ज्यादा से ज्यादा डंक लगाती है और घबरा जाती है।
4. खाया हुआ भोजन उगलना शुरू कर देती है।
5. बड़ी मधुमक्खियों की संख्या कम होने से, मधुमक्खियाँ छत्ते का तापमान बनाये रखने में अक्षम रहती है और शिशु ठण्ड की वजह से मर जाते हैं।
6. दूषित पराग मक्खियाँ इकट्ठा करके छत्ते में जमा कर देती हैं जिससे पैदा होने वाले व नवजात शिशु मर जाते हैं।
7. कभी-कभी रानी मक्खी भी प्रभावित हो जाती है। अण्डे देना बन्द कर देती है या अण्डे बिना किसी नियम के इधर-उधर देती रहती है जिससे बच्चा कक्ष में कहीं-कहीं बच्चे होंगे। इसके लक्षण बिल्कुल अमेरिकन फाउल ब्रुड से मिलते-जुलते हैं। ऐसे छत्ते जिनमें मधुमक्खियाँ बच जाती हैं, रानी मक्खी को कमेरी मक्खियाँ बदल सकती हैं। कभी-कभी रानी मक्खी की अण्डे देने की शक्ति क्षीण हो जाती है।

मधुमक्खियों को विषाक्तता से कैसे बचाएं

(1) मधुमक्खियों को विषाक्तता से बचाने के लिए कम हानिकारक कीटनाशक दवाईयाँ प्रयोग करनी चाहिए और कुछ और सावधानियाँ बरतनी चाहिए जो आगे दी गई हैं (सारणी - 9)।

(2) जब फूल खिलें हों और उन पर मक्खियां भोजन संचित कर रही हों, कीटनाशकों का छिड़काव न करें।

(3) कीटनाषक: किसी भी कीटनाशक की विषाक्तता इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस रूप में है। ऐसा कीटनाशक इस्तेमाल करना चाहिए जो हानिकारक कीड़े-मकौड़ों को नुकसान जरूर पहुँचाए परन्तु मधुमक्खियों के लिए सुरक्षित हो। दानेदार कीटनाशी मधुमक्खियों के लिए अधिक सुरक्षित है। कीटनाशी धूल पानी के घोल में छिड़काव की अपेक्षा अधिक हानिकारक है। तेल और पानी के घोल वाले कीटनाशक अधिक सुरक्षित हैं।

(4) कीटनाषकों के छिड़काव का ढंग

1. भूमि पर छिड़काव हवा के छिड़काव से अधिक सुरक्षित है। अगर हवा में छिड़काव किया हो तो कोशिश करें कि कीटनाशक इधर-उधर व आसपास के फूलों पर न फैल जाए।
2. ऐसे कीटनाशी जो शरीर में रिस कर असर करते हैं। जमीन के अन्दर ही लगाने चाहिए, पौधे के अन्दर नहीं।
3. कीटनाशियों का महीन छिड़काव, मोटे खुरदरे छिड़काव से अधिक सुरक्षित है।
4. कीटनाशियों को मिलाकर अगर छिड़काव किया जाए तो हानि कम होगी।
5. सीधे छत्तों पर छिड़काव न करें कम से कम जिस क्षेत्र में मधुमक्खियों के छत्ते हों छिड़काव न करें।
6. छिड़काव करने से पहले मधुमक्खी पालक को सूचित करें ताकि व मधुमक्खी छत्तों को कहीं स्थानान्तरित कर सकें या छत्तों को ढ़क दिया जाए। छत्तों का ढ़कते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें:-
    a. मधुमक्खियों के छत्तों में काफी जगह होनी चाहिए।
    b. हवा निकास का सही प्रबन्ध होना चाहिए।
    c. छत्तों को छाया में रखें।
    d. छत्तों के अन्दर पानी का प्रबन्ध करें।
    e. छत्तों को गीले कपड़े या बोरी से ढ़कने से तापमान बनाए रखने में मदद मिलती है।
    f. कोशिश करें कि मधुमक्खियों को अधिक समय तक ढ़क कर न रखा जाए।
    g. आसपास फूलों वाले पौधे: छिड़काव करते समय इस बात का ध्यान रखें कि आस-पास कहीं फूल तो नहीं खिले हैं।

h. ऐसे रसायनों को कीटनाशकों से मिला देना चाहिये जो मधुमक्खियों को दूर भगा दें जैसे ऐसीटोन, डाइइथाइल किटोन, इथाइल विनाइल किटोन, 2-हेक्सानोन, 3-हेक्सानेन, 2-हेप्टानोन, 4-हेप्टानोन, कार्बोलिक एसिड? क्रीसोट और नीम का तेल वगैरा।

मधुमक्खियों को विषाक्तता से कैसे बचाएं

क्रेन और वालकर (1983) ने बताया है कि मधुमक्खियों को अधिक हानि से बचाने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

- क्या नुकसान पहुँचाने वाले जीवों का प्रकोप इतना बढ़ गया है कि छिड़काव जरूरी है ?
- अगर हाँ, तो दवाई का चयन अच्छी तरह कर लें और दवाईयों का नाम पता अच्छी तरह पढ़ लें।
- जिस फसल पर छिड़काव करना है उसके आसपास फूल तो नहीं खिले हैं?

ज्यादातर दवाईयाँ मधुमक्खियों के लिए हानिकारक हैं। परन्तु कुछ दवाईयाँ ऐसी भी हैं। जो अपेक्षाकृत मधुमक्खियों के लिए कम हानिकारक या पूर्णतया सुरक्षित हैं। मधुमक्खियों व दूसरे परागणकर्त्ता कीटों का बचाने के लिए यह अतिआवश्यक है कि दवाईयों का छिड़काव तभी किया जाए जब इसकी बहुत ज्यादा जरूरत हो। सीधे मधुमक्खियों पर छिड़काव न करें। अगर हो सके तो जब फूलों का मौसम जोरों पर हो तो छिड़काव न किया जाए।

5. जम्मू और कश्मीर राज्य में मत्स्य पालन के अवसर, बाधांए एवं तकनीकी

डॉ प्रेम कुमार, डॉ पुनीत चौधरी एवं डॉ मुनीश्वर शर्मा
कृषि विज्ञान केंद्र जम्मू,
शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय जम्मू

मत्स्य पालन कृशि से संबधित एक महत्त्वपूर्ण गतिविधि है तथा किसी भी राश्ट्र के विकास में इसका अहम योगदान रहता है। भारतीय जलीय संसाधनों से सृमद्ध देष है तथा मत्सय उत्पादन के लिए यहाँ समुद्र, नदियों, नहरों, झीलों, जलाषयों तथा तालाबों के रूप मे आपार जल भणडार हैं। इसका अनुमान इस प्रकार से लगाया जा सकता है कि कुल नदियों की लम्बाई 31500 कि मी, झीलों, जलाषयों तथा कृत्रिम तालाबों का क्षेत्रफल 50 लाख हेक्टेयर है। इसके अतिरिक्त 8129 कि मी से अधिक दूरी तक फैली तटीय सीमा तथा 28 लाख कि मी की महाद्वीपीय भी जलीय संसाधनों की प्रचुर मात्रा को घोशित करती है।

जम्मू और कष्मीर भारत का पष्चिमी उत्तर का प्रदेष है। राज्य अपनी सीमा पाकिस्तान, तिब्बत और चीन को छूने के साथ देष के मानचित्र पर एक रणनितिक स्थान रखता है। कृशि जम्मू और कष्मीर को अर्थव्यस्था का प्रमुख अंग है। सीधे और परोक्ष रूप से 80 फीसदी आबादी इस पर आश्रित है और यह राज्य के राजस्व में लगभग 60 फीसदी योगदान करता है। परंपरागत रूप से जम्मू और कष्मीर में मत्स्य पालन का विकास मुख्य आखेट के खेल के रूप में हुआ। पिछले कुछ वर्शों के दौरान, एक प्रमुख खाद्य संसाधन के रूप मंे मत्स्य पालन के विकास की दिषा में एक पुनरभिविन्यास हुई है।

राज्य की अपनी अनूठी कृशि जलवायु परिस्थितियों को ध्यान मे रखते हुए मत्स्य पालन के सभी प्रकार को बढ़ावा देने के लिए गुंजाइष है। जलवाुय के आधार पर राज्य को तीन कृशि जलवायु क्षेत्रों में बांटा जा सकता है जोकि वहां की फसल पद्धति और उत्पादकता को भी निर्धारित करता है जैसे की लद्दाख षीतोश्ण, जम्मू और कष्मीर उपोश्णकटिवंधीय क्षेत्र क्षेत्र है सभी क्षेत्र मिलकर मत्स्य पालन की विभिन्न किस्मों के बढ़ावा देने की क्षमता प्रदान करते हैं। षीतोश्ण कटिवंध कष्मीर घाटी ठंडे पानी मछली पालन के विकास के लिए उपयुक्त हैं वहीं उश्णकटिवंधीय क्षेत्र जम्मू, गर्म पानी की मछलियों के विकास के लिस क्षमता रखता है। गर्म मत्स्य पालन के अलावा कठुआ, उधमपुर, डोडा, रजौरी और पुंछ के क्षेत्रों में ट्राउट मत्स्य उत्पादन के लिए भी क्षमता है। लद्दाख क्षेत्र ठंडे पानी और खारे पानी के मत्स्य पालन पालन के लिए अवसर प्रदान करता है।

वर्तमान समय में मत्स्य क्षेत्र कुछ भागों में लोगों की आजीविका में एक महत्पूर्ण भमिका निभा रहा है। यह योगदान मुख्य रूप से प्राकृतिक जल संपदाओं से मछली पकड़ना, बेचना और परिस्थिकी पर्यटन के रूप में हैं। केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार मछली पालन को विकसित करने के लिए कुछ बर्शों पूर्व बहुत ही आकर्शक योजना का क्रियान्वन किया

जिसका प्रभाव अभी दिखना षुरू हो रहा है लोगों की मत्स्य पालन में रूचि लेने, तालाब बनाने तथा मछली के उत्पादन में बढ़ोतरी होने से।

जम्मू और कष्मीर राज्य में 40 हजार हेक्टेयर क्षेत्र मंे पानी बारहमासी नदियों, झीलों, जलषओं, सार्स के रूप मंे फैला हुआ है जिसमें 250 उच्च ऊंचाइ्र की झीलें भी षामिल है। प्रदेष की 27781 कि मी लंबाई की नदियां 40 लाख टन मछली उत्पादन की क्षमता रखती हैं। जलाषय के अंतर्गत कुल क्षेत्र 0.07 लाख हेक्टेयर है और 1248 छोटी और बड़ी झीलें और जल निकाय हैं। इस तरह से कुल जलक्षेत्र 39921.8 हेक्टेयर में फैला हुआ है।

जम्मू व कष्मीर में मत्स्य पालन की अपार संभावनाएं हैं, यहां की 70 प्रतिषत से अधिक जनता मछली खाती है और बड़ी मात्रा में यहाँ पर मछली का आयात दूसरे राज्यों से मागं की पूर्ति करने के लिए किया जाता है। मत्स्य पालन इस राज्य के सामाजिक एंव आर्थिक विकास में एक बड़ी भूमिका अदा कर सकती है। इसके अतिरिक्त बेरोज़गारी हटाने और जीवोंकोपार्जन के लिए भी यहां के युवाओं मंे एक अवसर पैदा कर सकती है। इस बात को समझते हुए केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार ने मत्स्य पालन को प्रोत्सहित करने के लिए गर्म पानी तथा ठंडे पानी के मछली पालन के लिए दो योजनाएं कुछ वर्षो पूर्व शुरु की गई जिसके फलस्वरूप इस क्षेत्र में कुछ परिवर्तन की शुरूआत हुई। परन्तु कुछ बाधांए मुख्यरूप से मत्स्यकी क्षेत्र को प्रभावित कर रही है जोकि नीचे सूचीबद्ध है।

1. राज्य का प्राकृतिक जल क्षेत्र जिसमे नदियां भी षामिल हैं वह प्रदुशण, अतिक्रमण और गाद की वजह से सिकुड़ती जा रही है एवं विषेशरूप से मछली तथा जलीय जैविक जीवन को प्रभावित कर रही है अधिकांष नदियों में जलकुभी तथा वर्शा के बाद गाद ने मछली उत्पादन को प्रभावित करते हुए जलीय परिस्थितिकी को एक स्तर तक नश्ट कर दिया है। अतिक्रमण तथा प्रदुशण के परिणमस्वरूप नदियों में उपस्थित विभिन्न मछली प्रजातियों की प्रजनन भूमि विषेश रूप से क्षतिग्रस्त हो गई है जिसका एक मुख्य उदाहरण षाइजोथोरेक्स प्रजाति की मछलियां है। जम्मू व कष्मीर की झीलें कृशि क्षेत्र बढ़ाने के लिए तथा जलीय पौधों की विस्फोटक बृद्धि के परिणामस्वरूप तीव्र गति से सिकुड़ती जा रही है।
2. नदियों में मछली के संमहरण की गम्भीर आवष्यकता हैं बांध और तटबंधों के निर्माण के वजह से झील खत्म होती जा रही है और जो पतली धाराएं निकलती थी वह भी खत्म होती जा रही हैं जिनके कारण मछली की वृद्धि प्रभावित हो रही है।
3. मौजूदा बुनियादी ढांचे में नवीकरण की आवष्यकता है अथवा वह वर्तमान मत्स्य पालन वृद्धि के विकास के लिए पर्याप्त नहीं होगा। वर्शभर गुणवत्ता पूर्ण मछली बीज की आपूर्ति आपूर्ति की आवष्यकता है।
4. मत्स्य प्रजनन गृह में सुधार की आवष्यकता है जिसमें नये प्रजनन, प्रेरित प्रजनन तथा अनुवंषिकि सुधरित स्टाक सम्मिलित है।

5. धान व मछली पालन के साथ-साथ अन्य एकीकृत कृशि प्रणाली पर विषेश ध्यान देने की आवष्यकता हैं।
6. निजी स्रोत में मछली की हैचरीज खोलने के लिए किसानों को बढ़ावा देने की आवष्यकता है क्योंकि अभी तक एक भी प्रभावी निजी हैचरी राज्य में अनुपस्थित है।

मत्स्य क्षेत्र में विकास की क्षमता

1. राज्य के गांवों में पंचायती तालाबों की कोई ठीक व्यवस्था नहीं है। जिसके कारण यह तालाब उत्पादन की उच्च क्षमता रखने के वावजूद निश्क्रिय पड़े हैं जोकि रोजगार उत्पादित करने खाद्य सुरक्षा एवं आजीविका पालन में एक महत्वपूर्ण योगदान कर सकते सकते हैं।
3. राज्य मे नहर में मछली पालन के क्षेत्र में भी काम करने की आवष्यकता है विश्व के कई अन्य देशों में इसमें काफी सफलता प्राप्त हुई है।
4. मत्स्य आखेट के खेल को बढ़ावा इस क्षेत्र को विकसित करने के लिए दिया जाना चाहिये जिसमे देश के भीतर एवं बाहर से लोगों की आमलित कर सकते हैं। मछली पकड़ने के टूर्नामेंट या त्यौहार का अयोजन राज्य में पर्यटन को बढ़ावा देने का हिस्सा बनाया जाना चाहिए।
5. सजावटी मछली को विकास की जबरदस्त गुंजाईश है। वर्तमान समय में अधिकतर सजावटी मछलियां पष्चिम बंगाल, दिल्ली और पंजाब जैसे विभिन्न राज्यों से आयात की जा रही है। सजावटी मछली पालन और उनके प्रजनन को प्राथमिकता की आवष्यकता है।

टिकाऊ मत्स्य पालन और मत्स्य उत्पादन में आत्मर्निभरता के लिए राज्य के प्राकृतिक एवं कृत्रिम जल संसाधनों की जिम्मेदारी के साथ इस्तेमाल की आवश्यकता है अपने विविध कृषि जलवायु सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए जम्मू और कष्मीर में मत्स्य पालन के सभी प्रकार के बढ़ने की क्षमता है तथा यह रोजगार के अवसर प्रदान करने, कृषि के विविधीकरण, मछली किसानों के जीवोकोपर्जन में भूमिका तय कर सकता है। अर्थव्यस्था मंे भी इस क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए सेंट्रल और राज्य स्तर पर और अधिक प्रयास की आवष्यकता है।

मछली पालन की तकनीकी

मछली हेतु तालाब की तैयारी बरसात के पूर्व ही कर लेना उपयुक्त रहता है। मछलीपालन मछलीपालन सभी प्रकार के छोटे-बड़े मौसमी तथा बारहमासी तालाबों में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ऐसे तालाब जिनमें अन्य जलीय वनस्पतिक फसलें जैसे- सिंघाड़ा, कमलगट्टा, मुरार (ढ़ेस) आदि ली जाती है, वे भी मत्स्यपालन हेतु सर्वथा उपयुक्त होते हैं। मछलीपालन हेतु तालाब में जो खाद, उर्वरक, अन्य खाद्य पदार्थ इत्यादि डाले जाते हैं उनसे तालाब की मिट्टी तथा पानी की उर्वरकता बढ़ती है, परिणामस्वरूप फसल की पैदावार भी

बढ़ती है। इन वनस्पतिक फसलों के कचरे जो तालाब के पानी में सड़ गल जाते हैं वह पानी व मिट्टी को अधिक उपजाऊ बनाता है जिससे मछली के लिए सर्वोत्तम प्राकृतिक आहार प्लैकटान (प्लवक) उत्पन्न होता है। इस प्रकार दोनों ही एक दूसरे के पूरक बन जाते हैं और आपस में पैदावार बढ़ाने मे सहायक होते हैं। धान के खेतों में भी जहां जून जुलाई से अक्टूबर नवंबर तक पर्याप्त पानी भरा रहता है, मछलीपालन करके अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की की जा सकती है। धान के खेतों में मछलीपालन के लिए एक अगल प्रकार की तैयारी करने की आवश्यकता होती है।

किसान अपने खेत से अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए खेत जोतता है, खेतों की मेड़ों को यथा समय आवश्यकतानुसार मरम्मत करता है, खरपतवार निकालता है, जमीन को खाद एवं उर्वरक आदि देकर तैयार करता है एवं समय आने पर बीज बोता है। बीज अंकुरण पश्चात् पश्चात् उसकी अच्छी तरह देखभाल करते हुए निंदाई-गुड़ाई करता है, आवश्यकतानुसार नाइट्रोजन, स्फूर तथा पोटाष खाद का प्रयोग करता है। उचित समय पर पौधों की बिमारियों की रोकथाम हेतु दवाई आदि का प्रयोग करता है। ठीक इसी प्रकार मछली की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए मछली की खेती में भी इन क्रियाकलापों का किया जाना अतिआवश्यक होता है।

तालाब की तैयारीः-

मौसमी तालाबों में मांसाहारी तथा अवांछनीय क्षुद्र प्रजातियों की मछली होने की आशंका नहीं रहती है तथापि बारहमासी तालाबों में ये मछलियां हो सकती है। अतः ऐसे तालाबों में जून माह में तालाब में निम्नतम जलस्तर होने पर बार-बार जाल चलाकर हानिकारक मछलियां व कीड़े मकोड़ों को निकाल देना चाहिए। यदि तालाब में मवेषी आदि पानी नहीं पीते हैं तो उसमें ऐसी मछलियों के मारने के लिए 2000 से 2500 किलोग्राम प्रति हेक्टयर प्रति मीटर की दर से महुआ खली का प्रयोग करना चाहिए। महुआ खली के प्रयोग से पानी में रहने वाले जीव मर जाते हैं। तथा मछलियां भी प्रभावित होकर मरने के बाद पहले ऊपर आती है। यदि इस समय इन्हें निकाल लिया जाये तो खाने तथा बेचने के काम में लाया जा सकता है। महुआ खली के प्रयोग करने पर यह ध्यान रखना आवष्यक है कि इसके प्रयोग के बाद तालाब को 2 से 3 सप्ताह तक निस्तार हेतुं उपयोग में न लाए जावें। महुआ खली डालने डालने के 3 सप्ताह बाद तथा मौसमी तालाबों में पानी भरने के पूर्व 250 से 300 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से चूना डाला जाता है जिसमें पानी में रहने वाली कीड़े मकोड़े मर जाते हैं। चूना पानी के पी.एच. को नियंत्रित कर क्षारीयता बढ़ाता है तथा पानी स्वच्छ रखता है। चूना डालने के एक सप्ताह बाद तालाब में 10,000 किलोग्राम प्रति हेक्टर प्रति वर्ष के मान से से गोबर की खाद डालना चाहिए।

तालाबों में खेतों का पानी अथवा गोठान का पानी वर्षाऋतु में बहकर आता है उनमें गोबर खाद की मात्रा कम की जा सकती है क्योंकि इस प्रकार के पानी में वैसे ही काफी मात्रा

में खाद उपलब्ध रहता है। तालाब के पानी आवक-जावक द्वार मे जाली लगाने के समुचित व्यवस्था भी अवष्य ही कर लेना चाहिए।

तालाब में मत्स्यबीज डालने के पहले इस बात की परख कर लेनी चाहिए कि उस तालाब में प्रचुर मात्रा में मछली का प्राकृतिक आहार (प्लैंकटान) उपलब्ध है। तालाब में प्लैंकटान की अच्छी मात्रा करने के उद्देष्य से यह आवश्यक है कि गोबर की खाद के साथ सुपरफास्फेट 300 किलोग्राम तथा यूरिया 180 किलोग्राम प्रतिवर्ष प्रति हेक्टर के मान से डाली जाये। अतः साल भर के लिए निर्धारित मात्रा (10000 किलो गोबर खाद, 300 किलो सुपरफास्फेट तथा 180 किलो यूरिया) की 10 मासिक किष्तों में बराबर-बराबर डालना चाहिए। इस प्रकार प्रतिमाह 1000 किला गोबर खाद, 30 किलो सुपर फास्फेट तथा 18 किलो यूरिया का प्रयोग तालाब में करने पर प्रचुर मात्रा में प्लैंकटान की उत्पत्ति होती है।

मत्स्य बीज संचयनः-

सामान्यतः तालाब में 10000 फ्राई अथवा 5000 फिंगरलिंग प्रति हैक्टर की दर से संचय करना चाहिए। यह अनुभव किया गया है कि इससे कम मात्रा में संचय से पानी में उपलब्ध भोजन का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता तथा अधिक संचय से सभी मछलियों के लिए पर्याप्त भोजन उपलब्ध नहीं होता। तालाब में उपलब्ध भोजन के समुचित उपयोग हेतु कतला सतह पर, रोहू मध्य में तथा म्रिगल मछली तालाब के तल में उपलब्ध भोजन ग्रहण करती है। इस प्रकार इन तीनों प्रजातियों के मछली बीज संचयन से तालाब के पानी के स्तर पर उपलब्ध भोजन का समुचित रूप से उपयोग होता है तथा इससे अधिकाधिक पैदावार प्राप्त की की जा सकती है।

पालने योग्य देशी प्रमुख सफर मछलियों (कतला, रोहू, म्रिगल) के अलावा कुछ विदेषी प्रजाति की मछलियां (ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प कामन कार्प) भी आजकल बहुतायत में संचय की जाने लगी है। अतः देशी व विदेशी प्रजातियों की मछलियों का बीज मिश्रित मछलीपालन अंतर्गत संचय किया जा सकता है। विदेशी प्रजाति की ये मछलियां देषी प्रमुख सफर मछलियों से कोई प्रतिस्पर्धा नहीं करती है। सिल्वर कार्प मछली कतला के समान जल के ऊपरी सतह से, ग्रास कार्प रोहू की तरह स्तम्भ से तथा काँमन कार्प मृगल की तरह तालाब के तल से भोजन ग्रहण करती है। अतः इस समस्त छः प्रजातियों के मत्स्य बीज संचयन होने पर कतला, सिल्वरकार्प, रोहू, ग्रासकार्प, म्रिगल तथा कामन कार्प को 20:20:15:15:15:15 के अनुपात में संचयन किया जाना चाहिए। सामान्यतः मछलीबीज पाँलीथीन पैकट में पानी भरकर तथा आँक्सीजन हवा डालकर पैक की जाती है। तालाब में मत्स्यबीज छोड़ने के पूर्व उक्त पैकेट को थोड़ी देर के लिए तालाब के पानी में रखना चाहिए। तदुपरांत तालाब का कुछ पानी पैकेट के अन्दर प्रवेश कराकर समतापन (एक्लिमेटाइजेषन) हेतु वातावरण तैयार कर लेनी चाहिए और तब पैकेट के मछलीबीज को धीरे-धीरे तालाब के

पानी में निकलने देना चाहिए। इससे मछली बीज की उत्तर जीविता बढ़ाने में मदद मिलती है।

ऊपरी आहारः- मछली बीज संचय के उपरात यदि तालाब में मछली का भोजन कम है या मछली की बाढ़ कम है तो चांवल की भूसी (कनकी मिश्रित राईस पालिस) एवं सरसो या मूंगफली की खली लगभग 1800 से 2700 किलोग्राम प्रति हेक्टर प्रतिवर्ष के मान से देना चाहिए। इसे प्रतिदिन एक निश्चित समय पर डालना चाहिए जिससे मछली उस खाने का समय बांध लेती है एवं आहार व्यर्थ नहीं जाता है। उचित होगा कि खाद्य पदार्थ बोरों में भरकर डण्डों के सहारे तालाब में कई जगह बांध दें तथा बोरों में बारीक-बारीक छेद कर दें। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि बोरे का अधिकांश भाग पानी के अन्दर डुबा रहे तथा कुछ भाग पानी के ऊपर रहे। सामान्य परिस्थिति में प्रचलित पुराने तरीकों से मछलीपालन करने में जहां 500-600 किलो प्रति हेक्टर प्रतिवर्ष का उत्पादन प्राप्त होता है, वहीं आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से मछलीपालन करने से 3000 से 5000 किलो/हेक्टर /वर्ष मत्स्य उत्पादन कर सकते हैं। आंध्रप्रदेश में इसी पद्धति से मछलीपालन कर 7000 किलो/हेक्टर/वर्ष तक उत्पादन लिया जा रहा है।

मछलीपालको को प्रतिमाह जाल चलाकर संचित मछलियों की वृद्धि का निरीक्षण करते रहना चाहिए, जिससे मछलियों को दिए जाने वाले परिपूरक आहार की मात्रा निर्धारित करने में आसानी होगी तथा संचित मछलियों की वृद्धि दर ज्ञात हो सकेगी। यदि कोई बीमारी दिखे दिखे तो फौरन उपचार करना चाहिए।

परम्परागत मछलीपालन में हम भारतीय कार्प मछलियां कतला, रोहू और मृगल का पालन करते हैं। भारतीय कार्प मछलियां मूलतः नदियों की वासी में और यही कारण है कि तालाबों के रूके हुए पानी में यह स्वतः प्रजनन नहीं करती हैं। तीनों को एक साथ पाला जाता है क्योंकि इनका आपस में अच्छा सामंजस्य है तथा खाने की आदतें भिन्न हैं। अतः तीनों को साथ रखने पर कोई प्रतिस्पर्द्धा नहीं होती है।

मछलियों के वृद्धि की जांचः-

समय-समय पर तालाब के पानी में जाल डालकर मछली की बाढ़ और उसका स्वास्थ्य आदि देखते रहना चाहिए एवं यदि कोई कमी दिखाई दे तो मछली विभाग के स्थानीय कार्यालय से संपर्क कर उसका निदान करवाना चाहिए। जाल चलाते रहने से मछलियो की भागदौड़ तथा व्यायाम होता रहता है एवं इस प्रकार उनकी निरंतर आषातीत वृद्धि तथा जागरूकता में मदद मिलती है।

मत्स्याखेट एवं विक्रय

मत्स्य बीज के संचयन के बाद 10 से 12 माह में मछली बेचने योग्य हो जाती है। एक वर्ष में कतला एक से डेढ़ किलो, रोहू एक किलो, मृगल 750 ग्राम से एक किलो, सिल्वरकार्प

डेढ़ किलो, कामनकार्प एक से डेढ़ किलो, ग्रासकार्प डेढ़ किलोग्राम तक वृद्धि हो जाती है। यदि यदि उचित ढंग से मिश्रित मछलीपालन किया जावे तो एक हेक्टर जलक्षेत्र में प्रतिवर्ष औसतन 3 हजार किलोग्राम से 5 हजार किलोग्राम तक मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

6. ब्रांडिंग और विपणन: कृषि आय बढ़ाने के बेहतर विकल्प

पवन कुमार शर्मा, सूरज प्रकाश, सुधीर सिंह जम्वाल और जगदीश कुमार
शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय जम्मू

जैविक कृषि के अंतगर्त सबसे अधिक भूमि मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों में पायी जाती है। इन चार राज्यों में 1.3 मिलियन हेक्टेयर जैविक क्षेत्र के रूपांतरण का अनुमान है। सिक्किम भारत का पूर्ण जैविक उत्पादन राज्य घोषित हो चूका है, जिसमें 76,000 हेक्टेयर कृषि योग्य खेत जैविक प्रमाणित हैं। कृषि विपणन मुख्य रूप से कृषि उत्पादों की खरीद और बिक्री से जुड़ा है। पुराने समय में जब गांव कमोबेश आत्मनिर्भर थे, कृषि का विपणन बहुत आसान था। यह प्रमाणित है कि यदि किसान अपने उत्पादों को सीधे उपभोक्ताओं को बेच सकें तो उन्हें अधिक लाभ होगा। आज के कृषि विपणन को उपभोक्ता तक पहुंचने से पहले अंतर्राष्ट्रीय स्तर के मानकों का ध्यान रखने की आवश्यकता है।

भारत में महत्वपूर्ण पारंपरिक कृषि प्रौद्योगिकियों के कई उदाहरण हैं लेकिन दुर्भाग्यवश ये छोटी स्थानीय प्रणालियों तक ही सीमित रहे। इसलिए यह जरूरी है कि ऐसी प्रौद्योगिकियों को एकत्र, प्रलेखित और विश्लेषण किया जाए ताकि वैज्ञानिक सिद्धांतों, आधारों तथा तथ्यों से इन्हे उचित रूप से समझा जा सके। ऐसा करने से इन प्रौद्योगिकियों को लोकप्रिय बनाना तथा बढ़ावा देना आसान हो जाएगा।

वैदिक कृषि, होमोथेरेपी, जैव गतिशील अभ्यास, ऋषि कृषि, ब्रह्मांडीय ऊर्जा, काउडुंग और मूत्र, जैव उर्वरक, वर्मिन-कंपोस्ट, मिट्टी की उर्वरता सुनिश्चित करने के लिए कीड़े-धोने और कीटों के नियंत्रण के लिए जैव एजेंटों और जैव कीटनाशकों के उपयोग के सिद्धांतों को शामिल करते हुए जैविक खेती की स्वदेशी अवधारणा को अपनाया जा सकता है।

लेकिन इन प्रौद्योगिकियों के विस्तार के लिए निम्नलिखत बिंदुओं पर ध्यान देना आवश्यक है:

प्राकृतिक उत्पादों के प्रभावी विपणन के सिद्धांत:

शुरुआत में केवल उन फसलों का चयन किया जाना चाहिए जो कम उर्वरक गहन करने वाली तथा निर्यातयोग्य हों, जैसे कि बासमती चावल, फल और सब्जियां, और औषधीय जड़ी बूटी। उपभोक्ताओं के बीच बढ़ती जागरूकता के परिणामस्वरूप गुणवत्ता वाले भोजन की मांग में वृद्धि हो रही है। इस तरह प्राकृतिक खेती अंतरराष्ट्रीय बाजारों में कृषि उत्पादों के लिए अधिक दाम प्राप्त करने में मदद कर सकती है। पारंपरिक क्षेत्र को एक बार में जैविक या प्राकृतिक खेती में बदलना मुश्किल है। इसके लिए जैविक कृषि क्षेत्रों की पहचान की जानी चाहिए, जैसे कुछ पहाड़ी क्षेत्र जहां वर्तमान में रासायनिक उर्वरक का उपयोग बहुत कम है यां जो प्राकृतिक रूप से ही जैविक हैं। इस तरह हम कृषि में बेहतर उत्पादन तथा आर्थिक लाभ को सुनिश्चित कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के लिए एक सक्षम संस्थागत तंत्र स्थापित किया जा सकता है । जैविक खेती के तहत अधिसूचित चयनित

समूहों/क्षेत्रों में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की खरीद को गैरकानूनी बनाने के लिए एक सरकारी नीति बनाई जानी चाहिए ।

प्राकृतिक तथा जैविक उत्पादों का प्रमाणन एवं विपणन

प्राकृतिक तथा जैविक उत्पादों का प्रमाणन बाजार में कार्बनिक खाद्य की पहचान में मदद करता है। जबकि प्रमाणन किसानों को खरीदारों को खोजने में मदद करता है, यह उपभोक्ताओं को मूल और गुणवत्ता वाले कार्बनिक उत्पादों की बिक्री भी सुनिश्चित करता है। चूंकि देश में जैविक फसलों और खाद्य उत्पादों का बाजार बढ़ रहा है, इसलिए भारत सरकार ने किसानों को प्रमाणन प्राप्त करने में मदद करने के लिए कदम उठाए हैं, जिससे यह सत्यापित ही सके कि किसान का उत्पाद जैविक उत्पादन के राष्ट्रीय मानकों (एन.एस.ओ.पी.) के अनुरूप है। भारत में निर्यात तथा घरेलू बाजार के लिए दो अलग-अलग जैविक प्रमाणन प्रणालियां हैं। दोनों प्रणालियां सामान्य राष्ट्रीय मानकों पर आधारित हैं लेकिन सत्यापन और प्रलेखन के लिए विभिन्न दृष्टिकोण अपनाती हैं।

1. निर्यात के लिए राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एन.पी.ओ.पी.)
2. घरेलू और स्थानीय बाजारों के लिए भारत के लिए भागीदारी गारंटी प्रणाली (पी.जी.एस.-इंडिया)

एन.पी.ओ.पी. प्रमाणीकरण

एन.पी.ओ.पी. प्रमाणन एक तृतीय-पक्ष प्रमाणन है, जिसमें कृषि उपज का खेत या प्रसंस्करण एक मान्यता प्राप्त कार्बनिक प्रमाणन एजेंसी द्वारा राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय कार्बनिक मानकों के अनुसार प्रमाणित होता है। एन.पी.ओ.पी. प्रमाणन की सुविधा कृषि प्रसंस्कृत खाद्य एवं निर्यात विकास प्राधिकरण (ए.पी.डा.) द्वारा दी जाती है, जो भारतीय वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के तहत कार्य करता है।

भागीदारी गारंटी प्रमाणीकरण

भागीदारी गारंटी स्थानीय रूप से केंद्रित गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली हैं, जो विश्वास, सामाजिक नेटवर्क और ज्ञान विनिमय की नींव पर बने हैं। जैविक कृषि के मामले में, पी.जी.एस. एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समान स्थितियों में लोग (इस मामले में उत्पादक) एक दूसरे के उत्पादन प्रथाओं का आकलन, निरीक्षण और सत्यापन करते हैं और सामूहिक रूप से समूह की पूरी होल्डिंग को जैविक घोषित करते हैं। पी.जी.एस.-इंडिया को भारत सरकार के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा अपने राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र (एनसीओएफ), गाजियाबाद के माध्यम से सुविधा प्रदान की जाती है।

बाजार में जैविक खाद्य की पहचान करने का एकमात्र तरीका इसके प्रमाणीकरण और गुणवत्ता चिह्न (LOGO) को सत्यापित करना है, खाद्य सुरक्षा और मानक (जैविक खाद्य पदार्थ) विनियमों की आवश्यकता के अनुसार, सभी जैविक खाद्य पदार्थों को अपने प्रमाणन चिह्न के साथ एक 'जयविक भारत' का चिह्न होना भी अनिवार्य है।

जैविक खेती प्रमाणन प्राप्त करने के लिए प्रक्रिया

कृषि उपज के लिए जैविक खेती प्रमाणन प्राप्त करने के लिए देख रहे किसी भी व्यक्ति को शुल्क और पूर्ण क्षेत्र सत्यापन के साथ अपेक्षित प्रारूप में एक आवेदन प्रस्तुत करना होगा। आवेदन जमा करने से पहले आवेदक या किसान के लिए यह सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है कि उसका खेत जैविक फसल उत्पादन के लिए राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एनपीओपी) द्वारा निर्धारित मानक के अनुरूप हो ।

जैविक खेती की आवश्यकताएं

कोई भी खेत जो जैविक कृषि प्रमाणन प्राप्त करने का प्रस्ताव करता है, उसे राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एनपीओपी) द्वारा निर्धारित निम्नलिखित मानकों के अनुरूप होना चाहिए। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना भी ज़रूरी है:

- हर साल एक कार्बनिक उत्पादन योजना तैयार करें, लागू करें और अपडेट करें।
- कम से कम 5 साल तक लागू की हुई जैविक पद्धतियों का रिकॉर्ड बनाए रखें।
- जब भी आवश्यक हो जैविक प्रमाणन निरीक्षकों और अन्य उच्च अधिकारियों को क्षेत्र, संरचनाओं तथा उत्पादन के निरीक्षण की अनुमति प्रदान करें।
- जैविक खेती मान्यता के लिए ली जाने वाली निर्धारित फीस का भुगतान निर्धारित समय में करें।

निष्कर्ष

उत्तराखंड जैविक खेती पर एक राज्य स्तरीय अधिनियम शुरू करने वाला भारत का पहला राज्य है। 2021 में भारत में 11 करोड़ पंजीकृत प्रमाणित जैविक किसान हैं, इनमे अधिकतर भागीदारी गारंटी प्रणाली के तहत जैविक खेती के तरीकों का अभ्यास करते हैं। प्रभावी विपणन रणनीति ही प्राकृतिक उत्पादों की मांग पैदा करने में सहायक सिद्ध हो सकती है जिससे किसानों की आमदनी बढ़ाने तथा वातावरण को साफ़ रखने में मदद मिल सकेगी। सामाजिक मान्यता और बेहतर मुनाफा ही किसानों को प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रेरित कर सकता है। निजी संस्थाओं और व्यापारियों को बढ़ावा देना जो जैविक उत्पादों के प्रसंस्करण और विपणन में खर्च कर सकते हैं उन्हें प्रोत्साहन प्रदान किया जाना चाहिए। जैविक उत्पादों की सीधी बिक्री के लिए खरीदार विक्रेता बैठकों का आयोजन भी किया जाना चाहिए। इसके अलावा जैविक हाटों, प्रदर्शनियों और आउटलेटों की उपलब्धता भी सुनिश्चित

करवानी चाहिए ताकि किसान अपने जैविक उत्पाद सीधे उपभोक्ताओं को बेच सकें। इसके अतिरिक्त सरकार प्राकृतिक तरीके से उगाए हुए उत्पादों को खरीद कर कल्याणकारी योजनाओं जैसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पी.डी.एस.), एकीकृत बाल विकास सेवाएं (आई.सी.डी.एस.), मध्याह्न भोजन आदि से जोड़ कर प्रारंभिक बाजार सुनिश्चित करवा सकती है। जैविक तथा प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य का प्रावधान अन्य से 20 से 25 प्रतिशत तक किया जा सकता है।

मॉडलों के दीर्घकालिक प्रभाव और व्यवहार्यता को मान्य बनाने के लिए बहु-स्थान अध्ययन की आवश्यकता होती है। प्रौद्योगिकी के विस्तार से पहले, विभिन्न कृषि-पारिस्थितिक स्थितियों में इष्टतम संयोजन खोजने के लिए स्थान विशिष्ट अनुसंधान सुनिश्चित किए जाने चाहिए। जैविक तथा प्राकृतिक खेती के बारे में किसानों को तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए क्षेत्र प्रयोगों के आधार पर अनुसंधान कार्य को बढ़ावा देना चाहिए। इसके लिए संस्थागत सहायता तथा पर्याप्त धन कृषि अनुसंधान, विस्तार एवं विपणन के लिए प्रदान किया जाना चाहिए जो वर्तमान में अपर्याप्त है। पर्यावरण और स्वास्थ्य लाभों के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए किसानों को जैविक तथा प्राकृतिक खेती के बारे में शिक्षित करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए। महंगे और हानिकारक रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के विकल्प के तौर पर जैविक उर्वरकों के इस्तेमाल को बढ़ावा देना चाहिए। जैविक उर्वरकों को खेत में पैदा करने से जुड़े तरीकों की जानकारी भी किसानों को दी जानी चाहिए जिससे कृषि से जुडी कीमतों को कम किया जा सके। जैविक कृषि का प्रशिक्षण देने के लिए कृषि विज्ञान केंद्रों को सुसज्जित किया जाना चाहिए। किसान-से-किसान शिक्षा को कृषि स्कूलों के माध्यम से सुविधाजनक बनाने का प्रबंध भी किया जाना चाहिए। किसानों को सब्सिडी एवं ऋण आधारित वित्तीय सहायता भी दी जानी चाहिए जिससे वह जैविक उर्वरकों तथा जैव कीटनाशकों की उपलब्ध्ता को सुनिश्चित कराने में सक्षम हों।

7. जैविक खेती–जलवायु संरक्षण के लिए जरुरी

नरेंद्र पनोत्रा, विकास शर्मा, पवन शर्मा और राकेश शर्मा

जैविक खेती कृषि की एक नई अवधारणा नहीं है जैविक कृषि एक समग्र उत्पादन प्रबंधन प्रणाली है जो जैव–विविधता, जैविक चक्र और मिट्टी की जैविक गतिविधि सहित कृषि–पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को बढ़ावा देती है और बढ़ाती है। यह ध्यान में रखते हुए कि क्षेत्रीय परिस्थितियों के लिए स्थानीय रूप से अनुकूलित प्रणालियों की आवश्यकता होती है, यह गैर–कृषि वस्तुओं के उपयोग के बजाय प्रबंधन प्रथाओं के उपयोग पर जोर देता है। जैविक कृषि प्रणाली को इस तरह से विकसित किया गया है कि यह–

क) पूरी प्रणाली के भीतर जैविक विविधता को बढ़ाता है
बी) मिट्टी की जैविक गतिविधि में वृद्धि करता है
ग) लंबे समय तक मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखता है
डी) भूमि पर पोषक तत्वों को बढाने के लिए पौधों और जानवरों के मलमूत्र का पुनर्चक्रण इस प्रणाली में शामिल है
ई) स्थानीय रूप से उपलब्ध सतत संसाधनों पर निर्भर होता है
च) मिट्टी, पानी और हवा के स्वस्थ उपयोग को बढ़ावा साथ ही साथ कृषि पद्धतियों के परिणामस्वरूप होने वाले प्रदूषण के सभी रूपों को कम करता है (कोडेक्स एलिमेंटेरियस 1999)
छ) लंबे समय तक मिट्टी की उर्वरता बनाए रखता है और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करता है।
ज) बहुत अधिक विविधता के कारण जलवायु परिवर्तन के लिए अत्यधिक अनुकूल है

जैविक कृषि न केवल एक विशिष्ट कृषि उत्पादन प्रणाली है बल्कि यह स्थायी आजीविका के लिए एक व्यवस्थित और समावेशी दृष्टिकोण भी है। जैविक कृषि की एक लंबी परंपरा है और इसे कई जलवायु क्षेत्रों और स्थानीय परिस्थितियों के लिए अनुकूलित किया गया हैय परिणामस्वरूप, जैविक कृषि पर विस्तृत स्थिति–विशिष्ट जानकारी उपलब्ध है।

जैविक कृषि–जलवायु संरक्षण के लिए एक रणनीति

जैविक कृषि इस मायने में अदितीय है कि यह अधिकांश तत्वों को कृषि प्रणाली में व्यवस्थित रूप से एकीकृत करती है। यह जलवायु संरक्षण पर बेहतर प्रभाव डालता है जिसमे अनिवार्य मानक शामिल हैं। इसमें निरीक्षण और प्रमाणन भी शामिल है जो जैविक सिद्धांतों और मानकों के अनुपालन की गारंटी देता है। इन सबके फलस्वरूप, जैविक कृषि ग्रीन हाउस गैसेस की रिलीज को कम करने, मिट्टी और बायोमास में कार्बन को अलग करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। दूसरा, इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि जैविक कृषि मुख्यधारा की कृषि से बेहतर है। यह मिट्टी की उत्पादकता में वृद्धि, लगातार खाद्य सुरक्षा, जैव विविधता संरक्षण और कई अन्य वजहों से प्राप्त होता है। यह और भी अच्छा है क्योंकि यह कृषि में अधिक उत्पादन के साथ साथ जलवायु परिवर्तन को रोकने में भी सहयोग करती है। एकल प्रौद्योगिकी के विपरीत, जैविक कृषि एकीकृत प्रौद्योगिकियों का व्यवस्थित दृष्टिकोण का अनुसरण करती है। जैविक कृषि में आवश्यक निरीक्षण और प्रमाणन प्रणालियों के कारण, पारंपरिक कृषि पद्धतियों की तुलना में कार्बन पृथक्करण की निगरानी और मूल्यांकन करना सरल, सस्ता और प्रभावी है। नीति निर्माताओं को ग्रीन हाउस गैसेस में कमी करने के लिए जैविक खेती की क्षमता को पहचानना चाहिए और इस क्षमता का उपयोग करने के लिए उपयुक्त कार्यक्रम विकसित करना चाहिए। यह विकसित देशों में भी उतना ही जरुरी है जितना कि विकासशील देशों में।

जैविक कृषि की कार्बन डाइआक्साइड उत्सर्जन को कम करने की क्षमता

जैविक कृषि कार्बन डाइआक्साइड उत्सर्जन को काफी कम कर सकती है। वर्तमान खेती के विकल्प के रूप में, यह स्थायी उत्पादकता के साथ साथ स्थायी फसल प्रणाली प्रदान करती है। गहन कृषि प्रणालियों के लिए, यह पारंपरिक कृषि की तुलना में काफी कम जीवाश्म ईंधन का उपयोग करती है। यह मुख्य रूप से निम्नलिखित चीजों के कारण है,

1. मृदा उर्वरता मुख्य रूप से कृषि के आंतरिक आदानों (जैविक खाद, फलियां उत्पादन, विस्तृत फसल चक्र आदि) के माध्यम से बनाए रखा जाता है।

2. ऊर्जा की मांग करने वाले अकार्बनिक उर्वरकों और रसायनों का इस्तेमाल नहीं किया जाता है, और बाहरी पशु आहार जोकि अक्सर दूसरे स्थानों से मंगाया जाता है उसका बहुत कम इस्तेमाल करते है जिससे इंधन की बचत होती है तथा प्रदूषण में भी कमी होती है। जिससे एक अधिक अनुकूल ऊर्जा संतुलन होता है।
3. जैविक कृषि का मीथेन से बचाने में एक महत्वपूर्ण प्रभाव है। इस प्रणाली से मिट्टी में एरोबिक सूक्ष्मजीवों और उच्च जैविक गतिविधि को बढ़ावा देकर मीथेन के आक्सीकरण को बढ़ाया जा सकता है। दूसरे, जुगाली करने वाले आहार में परिवर्तन से मीथेन का उत्पादन काफी कम हो सकता है। हालांकि, धान के खेतों में मीथेन की कमी पर अनुसंधान अभी भी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है।
4. नाइट्रस आक्साइड मुख्य रूप से नाइट्रोजन की अधिकता के कारण होते हैं। इन्हें जैविक कृषि में प्रभावी रूप से कम किया जाता है।
5. कोई अकार्बनिक नाइट्रोजन उर्वरक का उपयोग नहीं किया जाता है, जो स्पष्ट रूप से कुल नाइट्रोजन की मात्रा को सीमित करता है और उर्वरक संश्लेषण के लिए ऊर्जा की मांग के दौरान होने वाले उत्सर्जन को कम करता है।
6. पशु आहार, प्रोटीन में कम और फाइबर में अधिक होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उत्सर्जन मूल्य कम होता है।
7. जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप में बायोमास का उपयोग करना उत्सर्जन में कमी के लिए एक अन्य विकल्प प्रदान करता है। इस क्षेत्र में जैविक कृषि अच्छी स्थिति में क्योंकि यह अकार्बनिक उर्वरकों का इस्तेमाल नहीं करता है जो नाइट्रस ऑक्साइड के महत्वपूर्ण उत्सर्जन का कारण होते हैं और बहुत अधिक ऊर्जा का उपयोग करते है।

चुनौतियां

इसकी जटिलता के कारण जैविक कृषि रामबाण नहीं है। जैविक खेती के लिए गहन ज्ञान चाहिए और भूमि को इसमें परिवर्तित करने के लिए संगठित और उच्च गुणवत्ता वाले प्रशिक्षण के साथ–साथ सूचना और सलाहकार सेवाएं बहुत जरुरी हैं। विकासशील देशों में बाजार संरचना जैविक किसानों के लिए जोखिम प्रस्तुत करती है। वर्तमान में, कुछ क्षेत्र दृढ़ता से निर्यात उन्मुख हैं। इसमें मुख्य रूप से नकदी फसलें शामिल हैं इसलिए इनका मूल्य उच्च कृषि अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जिसके परिणामस्वरूप उत्पाद के निर्यात के लिए बाजारों पर खतरनाक निर्भरता हो सकती है और स्थानीय बाजारों में विविधीकरण की आवश्यकता है। कुछ क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव इतने विनाशकारी हो सकते हैं कि कृषि को पूरी तरह से छोड़ना पड़ सकता है। दो दशकों की अवधि के बाद जलवायु परिवर्तन के स्थानीय प्रभावों का पूर्वानुमान लगाना बहुत कठिन है। दीर्घकालिक परिवर्तनों की तैयारी के लिए अभी समय निकालना चाहिए।

निष्कर्ष

- जैविक कृषि में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने की काफी संभावनाएं हैं।
- जैविक कृषि तकनीकें मिट्टी में कार्बन डाइआक्साइड के पृथक्करण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।
- जैविक कृषि स्पष्ट रूप से रामबाण नहीं है और कई महत्वपूर्ण मुद्दों का समाधान किया जाना बाकी है। आरंभ करने के लिए अधिक शोध की आवश्यकता है।
- पारंपरिक कृषि की तुलना में कम पैदावार के लिए अक्सर जैविक कृषि की आलोचना की जाती है। हाल के शोध इस पूर्वाग्रह को अमान्य करते हैं, विशेष रूप से व्यापक कृषि प्रणालियों के संदर्भ में, जो विकासशील देशों में अधिकांशतः कृषि उत्पादन की विशेषता है।
- जलवायु परिवर्तन और परिवर्तनशीलता के लिए खेत में प्रजनन की स्व–अनुकूली क्षमता की विस्तार से जांच करने की आवश्यकता है। जैविक कृषि में प्रति इकाई उत्पाद उत्सर्जन पर भी अधिक शोध आवश्यक है।
- वर्तमान स्थिति में, जैविक कृषि के लिए उत्पादों, स्थानीय प्रसंस्करण संभावनाओं और निर्यात के बुनियादी ढांचे के लिए (स्थानीय) बाजारों तक पहुंच और विकास का विशेष महत्व है।
- स्पष्ट रूप से, यह ज्ञान विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों से जुड़ा हुआ है और बिना सावधानी और संशोधन के अन्य क्षेत्रों में स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है। सफल होने के लिए उन निकायों के बीच जैविक कृषि की क्षमता की व्यापक मान्यता की आवश्यकता है जो वर्तमान में मुख्य रूप से पारंपरिक कृषि को बढ़ावा देते हैं।

8. वैदिक कृषि का स्वरूप

सुधाकर द्विवेदी और प्रदीप राय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए उसे विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे भोजन, वस्त्र, आवास आदि यह प्रमुख है। यह भी निश्चित है कि इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मनुष्य को कुछ उद्यम करना होता है। तभी वह सुचारू रूप से अपना जीवन यापन कर सकता है। समाज में अनेक व्यवसाय शिल्प, व्यापार, कृषि, पशुपालन आदि को प्रमुखता दी जाती है।मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी होने के नाते वह समाज में रहता है। समाज में रहते हुए उसे विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे भोजन, वस्त्र, आवास आदि यह प्रमुख है। यह भी निश्चित है कि इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मनुष्य को कुछ उद्यम करना होता है। तभी वह सुचारू रूप से अपना जीवन यापन कर सकता है। समाज में अनेक व्यवसाय शिल्प, व्यापार, कृषि, पशुपालन आदि को प्रमुखता दी जाती है। समाज के अन्तर्गत आने वाले इन व्यवसायों में कृषि का विशेष महत्व है। जो भोजन का मुख्य आधार भी है। ऋग्वेद में ऋषि जुंए में पराजित द्यूतकर को निर्देश देता है कि इस निन्दनीय कार्य को छोड़कर वह कृषि करें। **अक्षैर्मादिव्यः कृषिमित् कृषस्व**। ऋग्वैदिक काल में अश्विन ने सर्वप्रथम कार्यों को हल (वृक) द्वारा बीज बोना सिखाया। इस आधार पर कहा जा सकता है कि अश्विन् देव का कृषि कला से घनिष्ठ सम्बन्ध था। वैदिक कालीन मनुष्यों का ऐसा विश्वास था कि कृषि का प्रारम्भ सर्वप्रथम पृथ्वी या पृथु वैन्य ने किया था। अथर्ववेद में भी पृथ्वी वैन्य नामक राजा को हल से भूमि जोतने की विद्या का आविष्कारक माना जाता है। वेन पुत्र पृथ्वी का वर्णन पुराणों में भी प्राप्त होता है। इसी कारण भूमि का नाम पृथ्वी के नाम पर पृथ्वी रखा गया। वैदिक काल में खेतों पर स्वामित्व किसी जाति विशेष का नहीं था अपितु एक परिवार के व्यक्ति का होता था।

वैदिक काल में जो कृषि का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। उसी परम्परा का पालन आज भी किया जा रहा है। भूमि को जोतकर बीज बोने योग्य तैयार किया जाता था। बीज बोने की क्रिया को वपन कहा जाता है। **भूमिरावपतं महत**। बुबाई के समय बीज के साथ खाद भी डाली जाती थी वह गोबर की होती थी जो पशुओं से ही प्राप्त होती थी। गोबर को प्राकृतिक खाद के रूप में प्रयोग किया जाता था जिसे करीष कहते थे।**सजग्माना अबिश्युषीरसिमन् गोष्ठेन करीषिणीः**। वैदिक युग में भूमि की जुताई के लिए हल ही एक मात्र साधन था। अथर्ववेद में छः बैल वाले हल, आठ बैल वाले हल अथवा बारह बैलों वाले हल का उल्लेख मिलता है। **इयं यवमष्टायोगैः षडयोगेभिरचरर्कृषुः**। इसके अतिरिक्त वेद में हल को सीर, सील, लांगन इन तीन नामों से भी जाना जाता था। पकड़ने वाली मूंठ को वेद में 'त्सरु' कहा गया है।**लांगलम् पवीरवत् सुशीमं सोमसत्सरु**। किसान या कृषक के लिए वेदों में कीनाश और सीरपति आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। ऐसा ज्ञात होता है कि वैदिक शब्द 'कीनाश' को ही रुपान्तरित करके आज प्रचलित भाषा में किसान शब्द प्रयुक्त किया जा रहा है। **शुनं सुफाला विकृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभियन्तु वाहैः**। हल का सुन्दर फाल भूमि की जुताई करने में सहायक होता था। इस फाल के लिए ऋग्वेद में 'स्तेग' शब्द का प्रयोग हुआ है जो भूमि में प्रविष्ट होकर खुदाई करता है।**स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वी**। हल द्वारा जुती हुई भूमि में जो रेखाएं बनती है इस रेखा को 'सीता' कहा जाता था। इस प्रकार का उल्लेख वेद में मिलता है।**इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूशाभिरक्षतु**। इन्द्र हल की रेखा को पकड़े जुते हुए खेत को वृष्टि द्वारा संसिक्त करें पूषा (सूर्य) उसकी रक्षा करे वह हल की रेखा रसयुक्त होकर हमें आगे आने वाले समय में अन्न रस प्रदान करें।

कृषि के कर्षण का कोई विशेष नियम नहीं है परन्तु भूमि को मृदु एवं बोने योग्य बनाने के लिए अनेक बार कर्षण (जोतना) आवश्यक है। कर्षण कार्य से तैयार की गयी भूमि में बीज बोने की प्रक्रिया को वपन कहा जाता था। कृषि कार्य के लिए उचित भूमि का होना आवश्यक है। वैदिक ऋषि ने कर्षण के पश्चात् खेतों में बीज बोने का उपदेश दिया–**युनक्त सीरा वि युगातनोत कृतेयौनौ वपतेह बीजम्**। यजुर्वेद में कर्षण क्रिया के द्वारा उत्पन्न अन्न के लिये 'कृष्टपच्या' शब्द का प्रयोग हुआ है तथा बिना कर्षण के द्वारा उत्पन्न अन्न के लिए 'अकृष्टपच्या' शब्दों का उल्लेख मिलता है–**कृष्टपच्या मे अकृष्टपच्याश्च में यज्ञेन कल्पन्ताम्।** बपन (बोने) के पश्चात् भूमि को सींचा जाता था। अथर्ववेद में घृत और शहद से भूमि को सींचने का वर्णन मिलता है–**सा नः सीते प्यसाभ्याववृत्सवोर्जस्वती घृतवत पिन्वतमाना**। अर्थात् घी और शहद के द्वारा योग्य रीति से सिंचित भूमि सब देवों, मरूतों द्वारा अनुमोदित हुई है। ऐसी

जुती भूमि घी से सिंचित हमें उत्तम रस युक्त फल से पूर्ण कर दें। उक्त विचार भले ही काल्पनिक प्रतीत होते हों लेकिन वैदिक सन्दर्भों के आधार पर इनकी सत्यता वर्तमान समय में भी सार्थक सिद्ध होती है। भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए आधुनिक काल की भांति वैदिक काल में भी कृषि के लिए खाद की आवश्यकता होती थी, किन्तु यह खाद रसायनयुक्त नहीं थी बल्कि प्रकृतिक होती थी। वैदिक काल में पशुओं को अधिक पाला जाता था और पशुओं के गो–मूत्र को भूमि उर्वर बनाने के लिए खाद के रूप में प्रयोग किया जाता था। वैदिक युग में गोबर की खाद को श्रेष्ठ माना जाता है किन्तु गोबर की खाद से भी अधिक श्रेष्ठ यज्ञ की खाद थी। यह खाद यज्ञ से बनती थी। कृषि की उत्पत्ति में सहायक वनस्पति एवं अन्न आदि की तथा घी, शहद की यज्ञों में जब आहुति दी जाती थी तो सूक्ष्म तत्व शक्तिशाली होकर वायु में संचरित हो जाते थे तथा वृक्षादि सभी को प्राप्त हो जाती थी। वर्तमान समय की भांति वैदिक काल में भी कृषि कार्य करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता होती थी। वैदिक काल में कृषि उपकरणों का एक विशेष नाम हुआ करता था। कानीश– हल चलाने अथवा खेती करने वाले को कीनाश या सीरपति कहा जाता था ऐसा उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है।**इन्द्र आसीत सीरपतिः शतक्रता कीनाशः**। अर्थात् इन्द्र न उत्तम भूमि पर बार–बार हल चलाया तथा यव, धान्य बोये इन्द्र हल का स्वामी था। फाल– हल के अग्र भाग को फाल कहा जाता था। इतना ज्ञान नहीं है कि फाल धातु से बना होता था या अन्य किसी वस्तु से। शतपथ ब्राह्मण में उल्लेख है कि यह खदिर (खैरा) की लकड़ी से बना होता था और शरीर की अस्थियों से इसकी तुलना की गई है–**अस्थिश्य एवास्य खदिरः समभवत।** अथर्ववेद में उल्लेख है कि सुन्दर फाल भूमि को सफलतापूर्वक खोदें, किसान सुगमता से बैलों के पीछे चलें जिससे हमें अधिक अन्न प्राप्त हो। **शुन सुफाला वि तदन्तु भूमिं**। हल में पकड़ने के लिए लकड़ी की मूठ लगाई जाती थी। यह मूंठ (त्सरू) चिकनी होती थी जिसे पकड़ने में सुख मिलता था। ऐसा वर्णन अथर्ववेद में मिलता है। **लांगलम पवीर वत्सुशीमं सोमसत्सरू**। उक्त सन्दर्भों के आधार पर स्पष्ट है कि अथर्व वैदिक काल में हल खदिर की लकड़ी का बना होता था। वर्तमान समय में भी कुछ स्थानों पर खदिर की लकड़ी का हल बानाया जाता है।

अष्ट्रा– इसका उपयोग बैलों को हॉकने के लिए किया जाता था। अथर्ववेद में इसका उल्लेख एक स्थान पर मिलता है–**शुनं वरत्र बहयन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय**। स्रणि– पके हुए अन्न को सृणि अर्थात् हंसिया द्वारा काटने का वर्णन अथर्ववेद में किया गया है–**उत्सृण्यः पक्वमायवन**। जब फसल पक्कर तैयार होती थी तब कृषि यन्त्रों की सहायता से कृषक अत्यन्त उत्साह से फसल की कटाई करते थे। शतपथ ब्राहमण में सस्य (फसल) काटने की क्रिया को 'लुनन्तः' शब्द से व्यक्त किया गया है। फसल पकने पर कृषक प्रसन्नता से कहता था कि मैं उस दयावान ईश्वर को जानता हूँ जिसने बहुत अधिक अन्न उत्पन्न किया है जो देव अन्न को एकत्रित करने वाला था। ऐसा उल्लेख अथर्ववेद में मिलता है।**वेदाहं प्यस्वन्तं चकार धान्यं बहु।संभृत्वा नाम यो देवस्तं वयं हवामहे।**। कृषक प्रसन्नतापूर्वक पकी हुई फसल को हजारों हाथों से सावधानीपूर्वक काटते थे और एक स्थान पर एकत्रित करते थे और हजारों हाथों वाला बनाकर उसका दान भी करते थे।**शतहस्त समाहर सहक्रहस्तं सं किर।कुतस्य कार्यस्य चेह स्फाति समावहे।**। पकी हुई फसल को हसिया से काटकर उन्हे गट्ठरों में बाँधकर खलिहान या घर पर लाया जाता था। खलिहान में पड़े सूखे जौ, धान्य, आदि फसलों को साफ करके घर पर लाते थे। उक्त प्रक्रिया के आधार पर कृषि कार्य करने से वैदिक समाज समृद्ध होता था।

9. जम्मू और कश्मीर में बागवानी की स्थिति–एक आर्थिक परिप्रेक्ष्य

अमित जसरोटिया, आरती शर्मा, राकेश शर्मा, अनिल भट्ट और दीप जी भट्ट

राष्ट्रीय परिदृश्य में बागवानी (फलों सहित फल, आलू सहित सब्जियाँ, कंद फसलें, मशरूम, कटे हुए फूल, मसाले, रोपण फसलें और औषधीय और सुगंधित पौधों सहित सजावटी पौधे) देश के कई राज्यों में आर्थिक विकास के लिए एक प्रमुख चालक बन गए हैं और यह कृषि के सकल घरेलू उत्पाद में 30.4 प्रतिशत का योगदान देता है।

- विश्व स्तर पर, भारत फलों और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है।
- भारत आम, केला, नारियल, काजू, पपीता, अनार आदि का सबसे बड़ा उत्पादक है।
- भारत मसालों का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक है
- अंगूर, केला, कसावा, मटर, पपीता आदि की उत्पादकता में भारत का प्रथम स्थान है।
- ताजे फल और सब्जियों का निर्यात वृद्धि मूल्य के संदर्भ में 14 प्रतिशत योगदान है और प्रसंस्कृत फलों और सब्जियों का 16.27 प्रतिशत है।
- कृषि में बागवानी उत्पादन का हिस्सा 33.3 प्रतिशत है, जिसमें से 25.9प्रतिशत फलों और सब्जियों का योगदान है, 3.5 प्रतिशत मसालों और मसालों द्वारा और 1.6प्रतिशत फूलों की खेती द्वारा दिया जाता है।

तालिका 1: बागवानी फसलों का मूल्य उत्पादन (2015–16)

फल का प्रकार	मूल्य आउटपुट (रुपये 00 करोड़)	कृषि में बागवानी मूल्य उत्पादन का प्रतिशत हिस्सा
सभी कृषि फसलें	12031	.
सभी फल और सब्जियां	3121	25.9
मसाले	425	3.5
फूलों की खेती	194	1.6
Plantation Crops		–
i. सुपारी	89	–
ii. काजू	48	–
iii. नारियल	128	–
iv. कोको	1.5	–
Total Plantation (i+ii+iii+iv)	266	2.21
कुल बागवानी	4006	33.3

जम्मू और कश्मीर में बागवानी की स्थिति

जम्मू और कश्मीर मूल रूप से एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है। प्रदेश की कृषि जलवायु परिस्थितियां, उपजाऊ मिट्टी, उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु फलों और सब्जियों की खेती के लिए अनुकूल हैं और बागवानी के विकास के लिए काफी संभावनाएं प्रदान करते हैं। इन संभावनाओं को देखते हुए, फल उगाना एक प्रमुख उद्योग बन गया है और राज्य के निर्यात में बड़े पैमाने पर योगदान देता है। यह विभिन्न प्रक्रियाओं में लोगों के एक बड़े हिस्से को अवशोषित करता है राज्य के घरेलू उत्पाद में बागवानी काबड़ा हिस्सा है। और बागवानी फसलों केमहत्व को देखते हुए राज्य सरकार बागवानी फसलों यानी फलों की खेती, सब्जियों की खेती, फूलों की खेती, मसालों और औषधियों की खेती, आदि के विकास पर काफी जोर दे रही है. राज्य में उगाए जाने वाले प्रमुख फलों में सेब, आम, अखरोट, बादाम, नाशपाती, चेरी, खुबानी, आड़ू, बेर आदि हैं। कश्मीरी सेब स्वाद और रंगरूप दोनों में प्रसिद्ध है। और निर्यात का अच्छा स्रोत है और सकल राज्य घरेलू उत्पाद (जी.एस.डी.पी.) बहुत अच्छा स्रोत है। जम्मू कश्मीर केंद्र शासित प्रदेश में उगाई जाने वाली प्रमुख सब्जियां प्याज, आलू, टमाटर, शलजम, मटर, मूली, गाजर, हरी सब्जियां आदि और मसाले जैसे मिर्च, लहसुन, हल्दी आदि हैं।

बागवानी जम्मू और कश्मीर की अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है, जो 7 लाख से अधिक परिवारों सहित 35 लाख से अधिक लोगों को आजीविका प्रदान करती है। राज्य ताजे और सूखे मेवों से 7500 करोड़ रुपये से अधिक आय उत्पन्न करता है। बागवानी कृषि के एक अनिवार्य हिस्से केरूप में उभरा है, जो बड़ी संख्या में कृषि आधारित उद्योगों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करता है जो रोजगार के पर्याप्त अवसर पैदा करते हैं और किसानों को आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जम्मू और कश्मीर राज्य को एक विविध कृषि जलवायु का आशीर्वाद प्राप्त है, जो कि सेब, अखरोट, बादाम, आम, लीची, चेरी, खुबानी, बेर, कीवी, जैतून, निम्बू प्रजाति आदि सभी प्रकार फलों के उत्पादन के लिए अनुकूल है।

फलों की खेती के तहत वर्ष 1960–61 में जो क्षेत्र 0.16 लाख हेक्टेयर था, वह वर्ष 2016–17 में बढ़कर 3.38 लाख हेक्टेयर होगया और इस अवधि के दौरान वर्ष 1960–61 में 0.30 लाख मीट्रिक टन से वर्ष 2016–17 में 22.35 लाख मीट्रिक टन का उत्पादन हुआ। केंद्र शासित प्रदेश जम्मू और कश्मीर में सबसे बड़ा उत्पादन क्रमशः सेब का (86.55 प्रतिशत) नाशपाती (3.30 प्रतिशत) और चेरी (0.56 प्रतिशत) और निम्बू प्रजाति (1.51 प्रतिशत) में होता है। सूखे मेवों की श्रेणी में, अखरोट का उत्पादन कश्मीर क्षेत्र (63.41 प्रतिशत) में सबसे अधिक मात्रा में होता है, इस के बाद जम्मू क्षेत्र (32.79 प्रतिशत) का स्थान आता है। कश्मीर घाटी में ताजे फलों का अधिकतम क्षेत्र और उत्पादन जिला बारामूला से किया जा रहा है, इस के बाद शोपियां, कुलगाम, कुपवाड़ा, अनंतनाग, पुलवामा, बडगाम, गांदरबल, बांदीपोरा और श्रीनगर का स्थान है। जम्मू क्षेत्र में, कठुआ भूमिक्षेत्र और ताजे फलों के उत्पादन में शीर्ष जिला है, इसके बाद जम्मू, राजौरी, पुंछ, डोडा, उधमपुर, सांबा, रियासी, रामबन और किश्तवाड़ हैं। जम्मू–कश्मीर ने 2017–18 में भारत में कुल बागवानी उत्पादन में लगभग 2.49 प्रतिशत का योगदान दिया जो 2016–2017 की तुलना में 0.38 प्रतिशत अधिक है। 2017–18 के दौरान जम्मू–कश्मीर में कुल फलों का उत्पादन 2429822 टन था जिसमें 2141182 टन ताजे फल और 288640 टन सूखे मेवे शामिल थे (बागवानी निदेशालय, कश्मीर). केंद्र शासित प्रदेश जम्मू और कश्मीर को सेब और अखरोट के लिए कृषि निर्यात क्षेत्र घोषित किया गया है। राज्य से सकल घरेलू उत्पाद में बागवानी का महत्वपूर्ण योगदान है। 2015–16 के दौरान 24.94 लाख मीट्रिक टन फलों का उत्पादनके उत्पादन से लगभग 6000.00 करोड़ रूपए का कारोबार हुआ।

तालिका 2: जम्मू और कश्मीर में 2015–16 के दौरान फलों की फसलों का उत्पादनमूल्य (लाख रुपये में)

फल	जम्मू और कश्मीर	राष्ट्रीय	फलों का राष्ट्रीय मूल्यउत्पादन में प्रतिशत योगदान
आम	6961	5839157	0.12
अंगूर	73	584781	0.01
सेब	371069	694073	53.5
नींबू	6822	765208	0.9
लीची	631	280232	0.23
चेरी	6782	7042	96.3
बादाम	4875	5991	81.4
अमरूद	1996	741226	0.27
नाशपाती	14414	77384	18.6
अखरोट	283128	299875	94.4

सेब, अखरोट, नाशपाती, आम, नींबू, चेरी और बादाम क्रमशः 371069, 283128, 14414, 6961, 6822, 6782, और 4875 लाख रुपये के मूल्य उत्पादन के साथ जम्मू और कश्मीर के केंद्र शासित प्रदेश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।संबंधित फसलों के राष्ट्रीय उत्पादन में चेरी (96.3 प्रतिशत) कायोगदान सबसे अधिक है, इसके बाद अखरोट (94.4 प्रतिशत), बादाम (81.4 प्रतिशत), सेब (53.5 प्रतिशत) और नाशपाती (18.6 प्रतिशत) का है।

जम्मू और कश्मीर से फलों का निर्यात और सकल राज्य घरेलू उत्पाद में बागवानी का योगदान

बागवानी फसलों के तहत वर्ष 2017–18 में 3.33 लाख हेक्टेयर क्षेत्र दर्ज किया गया था जिसमें 72.14 प्रतिशत क्षेत्र ताजे फलों के अंतर्गत था। इस वर्ष के दौरान फलों का उत्पादन 23.56 लाख मीट्रिक टन था जिसमें 20.74 लाख मीट्रिक टन ताजे फल और 2.81 मत सूखे मेवे शामिल हैं। बागवानी निदेशालय (योजना और विपणन) के अनुसार वर्ष 2017–18 के लिए राज्य के बाहर फलों का निर्यात 19.78 लाख मीट्रिक टन रहा और उसी वर्ष के दौरान फल और सब्जी का आयात 6.02 लाख मीट्रिक टन दर्ज किया गया। 2017–18 के दौरान, जम्मू और कश्मीर से 1955769.91 मीट्रिक टन ताजे फल और 22414.19 मीट्रिक टन सूखे मेवों का निर्यात किया गया था (बागवानी निदेशालय (पी एंड एम), जम्मू और कश्मीर)। अखरोट जम्मू–कश्मीर के लिए प्रमुख विदेशी मुद्रा अर्जक (127.21 करोड़ रुपये) के रूप में उभरा है, जिसमें से 472 मीट्रिक टन गोले के रूप में निर्यात किया गया तथा 3125 मीट्रिक टन कर्नेल के रूप में निर्यात किया गया (2017–18)। जम्मू–कश्मीर से 897.94 मीट्रिक टन बादाम के निर्यात से भी विदेशी मुद्रा के रूप में 30.84 करोड़ की कमाई हुई (2017–18)। सकल राज्य घरेलू उत्पाद (जी.एस.डी.पी.) में कृषि (फसल, पशुधन, वन और लॉगिंग, मत्स्य पालन और जलीय कृषि सहित) का हिस्सा 19.18% है। 1155083 लाख रुपये के योगदान के साथ सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि फसलों का 10.80% हिस्सा है। कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से जी.एस.डी.पी. में फलों का योगदान 32.84 प्रतिशत है।

22. वैदिक कृषिः कृषि विज्ञान और वैदिक विज्ञान से कृषि उत्पादकता और पर्यावरण संरक्षण में स्माव्यतता

दिक्षा, शौर्या शर्मा और सुधाकर द्विवेदी

परिचय

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति और स्वतंत्रता के बाद से दुनिया और भारत को खाद्य सुरक्षा के लिए कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसमें कुपोषण और अधिक खपत, खाद्य कीमतों में वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि, तेजी से आहार परिवर्तन, कृषि उत्पादन के लिए विभिन्न खतरे, खाद्य प्रणाली अनुसंधान के निवेश में गिरावट। और अक्षम उत्पादन प्रथाओं एवं आपूर्ति श्रृंखला में यह सब कमियाँ शामिल हैं। हरित क्रांति ने वास्तव में वैश्विक स्तर पर कृषि उत्पादन में वृद्धि की है, लेकिन इसने पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों को प्रभावित किया है। भूमि को साफ करने और उर्वरकों और जैविक अवशेषों के अक्षम उपयोग सहित वर्तमान कृषि पद्धतियों ने जल संसाधन, भोजन की गुणवत्ता और मिट्टी के क्षरण के साथ–साथ पारिस्थितिक आधार को भी कमजोर कर दिया है साथ ही कृषि ने ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस मोड़ पर, आधुनिक रासायनिक कृषि की बीमारियों को ठीक करने के उपाय के रूप में "जैविक खेती" को अपनाने पर एक गहरी जागरूकता पैदा हुई है और वैदिक खेती पारंपरिक कृषि का एक अच्छा विकल्प बन सकती है।

वैदिक काल– वैदिक युग (लगभग 1500–500 ईसा पूर्व), शहरी सिंधु घाटी सभ्यता के अंत और एक दूसरे शहरीकरण के बीच उत्तरी भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास में वो अवधि है जो केंद्रीय इंडोगंगेटिक मैदान में 600 ईसा पूर्व सी में शुरू हुआ।। इसका नाम वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद) से मिलता है। कृषि का व्यापक उल्लेख कृषि पराशर, मनुस्मृति, कौटिल्य के अर्थ–शास्त्र, वराहमिहिर की बृहत–संहिता, प्रारंभिक तमिलों के संगम साहित्य, अमरकोश, सुरपाल के वृक्षायुर्वेद, और कश्यपीय कृषिसूक्ति जैसे कई वैदिक ग्रंथों में मिलता है। ये ग्रंथ कृषि, बागवानी, वृक्षारोपण और पौधों की जैव विविधता के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं।

वैदिक कृषि की परिभाषा और अवधारणा– वैदिक कृषि वैदिक चेतना का आनंद लेने वाले किसानों द्वारा उगाए गए सभी जहरीले उर्वरकों, कीटनाशकों और जड़ी–बूटियों से मुक्त प्राकृतिक कृषि है, वैदिक कृषि। यह स्थानीय और ब्रह्मांडीय स्तरों पर प्रकृति की लय और चक्रों के साथ सहज रूप से वैदिक ध्वनियों का उपयोग करते हैं। पौधों की उच्च चेतना और आंतरिक बुद्धि को जगाने के लिए प्राकृतिक कानून की आवाज है, वैदिक कृशि तथा पौधों की वृद्धि और स्वास्थ्य देने वाले, पौष्टिक गुण चेतना को अधिकतम और उन्हें खाने वाले सभी के लिए शांतिपूर्ण, स्वस्थ जीवन को बढ़ावा दिया किया जा सके।

विभिन्न वेदों में हमारी विरासत के रूप में वर्णित कृषि–

विभिन्न वेदों में कृषिकों कई रूप में वर्णित किया है जैसे कृषि पराशर।

1. **कृषि पाराशर–** महर्षि वशिष्ठ के पोते महर्षि पाराशर द्वारा लिखित, पाठ में दो सौ तैंतालीस श्लोक हैं। इसमेंकृषि के सिद्धांत को इस तरह से प्रतिपादित किया गया है कि किसानों को इसके आवेदन से लाभ होगा। इस ग्रंथ में कृषि के सभी पहलुओं पर अवलोकन शामिल हैं जैसे कि कृषि से संबंधित मौसम संबंधी अवलोकन, कृषि का प्रबंधन, मवेशियों का प्रबंधन, कृषि उपकरण, बीज संग्रह और संरक्षण, जुताई और खेतों की तैयारी से लेकर कटाई तक और फसलों के भंडारण से संबंधित सभी कृषि प्रक्रियाएं शामिल हैं।
2. **वृक्षायुर्वेद–** यह पौधे के आयुर्वेद से संबंधित है जिसमें पौधों के जीवन से संबंधित हर पहलू पर चर्चा करता है जैसे कि रोपण से पहले बीजों की खरीद, संरक्षण और उपचार, आदि। मिट्टी के पीएच का चयन, पोषण और उर्वरक, पौधों के रोग और आंतरिक और बाहरी रोगों से पौधों की सुरक्षा आदि।
3. **योगिक कृषि–** यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें बीज सशक्तिकरण (ध्यान के माध्यम से), किसान के मन और हृदय का विकास (ध्यान के माध्यम से) और एकीकृत जैविक खेती (गाय उत्पादों, फसल

चक्र और एकीकृत कीट प्रबंधन के माध्यम से) शामिल है। जैसे–जैसे किसानों का विश्वास बढ़ता है, ध्यान के माध्यम से उनकी फसलों पर पड़ने वाले प्रभाव में वृद्धि होती है। बीज और बीज के अंकुरण से लेकर बुवाई, सिंचाई और विकास, फसल और मिट्टी की पुनःपूर्ति तक, फसल विकास चक्र के प्रत्येक चरण का समर्थन करने के लिए डिजाइन किए गए विशिष्ट विचार प्रथाओं के साथ दूर से और खेतों में नियमित ध्यान आयोजित किया जाता है।

4. **होमा खेती**– वैदिक विज्ञान पर आधारित इस कृषि पद्धति के बारे में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह "आकाश (अंतरिक्ष)" की शक्तियों को यानी प्रकाश और ध्वनि (नाद–ब्रह्मा) को पांचवें तत्व के रूप में पहचानती है ताकि दोनों ब्रह्मांडीय सूक्ष्म ऊर्जाओं का पौधों पर प्रभाव बढ सके।
5. **अग्निहोत्र**– यह प्रतिदिन सूर्योदय और सूर्यास्त के समय की जाने वाली विशेष रूप से तैयार की गई अग्नि के माध्यम से वातावरण को शुद्ध करने की एक प्रक्रिया है।

वैदिक खेती के लाभ– आधुनिक कृषि की तुलना में जैविक खेती के कई फायदे हैं।

1. **मृदा स्वास्थ्य पर वैदिक कृषि का प्रभाव–** कार्बनिक पदार्थों के साथ मिट्टी की सतह की मल्चिंग मिट्टी को नरम, चूर्णित और आर्द्र बनाती है जो अंततः लाभकारी रोगाणुओं के लिए मिट्टी में थोक घनत्व और सरंध्रता बनाए रखने के लिए एक अनुकूल वातावरण बनाती है। (नैनी एट अल, 2000)। जैविक खेती के कारण मिट्टी के भौतिक गुणों में सुधार का अनुपात–अस्थायी आयाम है, अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जैविक खेती बेहतर है क्योंकि क्षेत्र में अधिक अवशोषण और पानी का कम प्रवाह होता है।
2. **पारिस्थितिक लाभ**– जैविक खाद्य उत्पादन से मिट्टी और पानी का प्रदूषण समाप्त होता है। ऑन–साइट संसाधनों का लाभ उठाया जा सकता है। जैसे कि खाद के लिए पशुधन खाद या खेत में उत्पादित चारा। ऐसे पौधों और जानवरों की प्रजातियों का चयन करना जो रोग प्रतिरोधी हों और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल हों। पशुओं को मुक्त श्रेणी, खुली हवा में उठाना और उन्हें जैविक चारा प्रदान करना (नेजादकूर्की, 2012)। जैविक खाद्य उत्पादन स्थानीय वन्यजीवों को संरक्षित करने में मदद करता है। जहरीले रसायनों से बचकर, प्राकृतिक कीट नियंत्रण उपाय के रूप में मिश्रित रोपण का उपयोग करके, और क्षेत्र की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए, जैविक खेती स्थानीय वन्यजीवों को पारंपरिक कृषि जैसे प्राकृतिक आवास को छीनने के बजाय एक वापसी प्रदान करती है।
3. **कुशल ऊर्जा उपयोग–** जैविक खेतों के लिए प्रति रुपये उपज के उत्पादन के लिए ऊर्जा की आवश्यकता उनके पारंपरिक समकक्षों की तुलना में केवल एक तिहाई है, क्योंकि जैविक किसानों द्वारा नाइट्रोजन युक्त उर्वरक और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता है, कुल ऊर्जा इनपुट ६ हेक्टेयर की तुलना कुल ऊर्जा उत्पादन के साथ जैविक कृषि प्रणालियों के पक्ष में होती है।
4. **कम निवेश**– जैविक खेती में आम तौर पर उतना अधिक पूंजी निवेश शामिल नहीं होता जितना कि रासायनिक खेती में आवश्यक होता है। इसके अलावा, चूंकि जैविक खाद और कीटनाशकों का उत्पादन स्थानीय स्तर पर किया जा सकता है, इसलिए किसान की वार्षिक लागत भी कम होती है। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि रासायनिक खेती से जैविक खेती में स्थानांतरित होने पर, संक्रमण महंगा हो सकता है।
5. **स्वास्थ्य सुविधाएं**– खाद्य और खेत में खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता के मुद्दों के संबंध में अध्ययनों से पता चलता है कि गैर–जैविक की तुलना में जैविक खाद्य पदार्थों में कम से कम रासायनिक अवशेष थे (बेकर एट अल।, 2002)। यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि, खेतों में सिंथेटिक इनपुट के उन्मूलन के माध्यम से, जैविक खेती किसानों के रासायनिक कीटनाशकों के संपर्क में आने के जोखिम को कम करती है।
6. **कचरे का उपयोग –**वैदिक खेती ज्यादातर स्थानीय उपलब्ध कृषि संसाधनों, खेत तथा घर के उत्पादों का उपयोग करती है। जैविक खेती में सामान्य रूप से सभी जैविक कचरे और फार्म यार्ड खाद (FYM) या विशेष रूप से फीडलॉट खाद का खाद बनाना महत्वपूर्ण है।

भारत में जैविक खेती की बाधाएं– हालांकि जैविक खेती को अपनाने में कई फायदे हैं, लेकिन कुछ बाधाएं किसानों के स्तर पर अनुकूलन में बाधा डालती हैं। ये सीमाएँ थीं (1) यह श्रम गहन है। (2) अच्छे वैदिक कृषि पद्धतियों का छोटे किसानों तक प्रचार–प्रसार करना कठिन है, एक छोटे किसान के

लिए जैविक उत्पादों का विपणन करना मुश्किल हो सकता है।(3) यह महंगा भी हो सकता है, जैविक खेती में, मिट्टी की उर्वरता को नियमित रूप से जैविक उर्वरकों के प्रयोग से फिर से भरने की आवश्यकता होती है। छोटे किसान के लिए यह मुश्किल हो सकता है, जो कम मात्रा में उर्वरक खरीदेगा और उन्हें कहीं और से प्राप्त करेगा। इसके अलावा पैमाने की कम अर्थव्यवस्थाओं के कारण, लंबी दूरी से प्राप्त जैविक उर्वरकों से जुड़ी एक बड़ी परिवहन लागत हो सकती है। (4) यह भी देखा गया है कि जैविक खाद्य कीमतें स्थिर नहीं हैं और समय–समय पर उतार–चढ़ाव करती रहती हैं, चूंकि जैविक खाद्य उत्पादन की मात्रा कम है (कुल खाद्य उत्पादन का लगभग 1–2), इसलिए न्यूनतम समर्थन मूल्य जैसे सामाजिक सुरक्षा उपायों को लागू करना मुश्किल है।

निष्कर्ष–

वैदिक कृषि वैदिक भोजन का उत्पादन करेगा, जो सबसे शुद्ध, सबसे पौष्टिक और सबसे उपलब्ध महत्वपूर्ण भोजन है। वैदिक खेती आधुनिक प्रणाली के वैकल्पिक तरीके के रूप में गति प्राप्त कर सकती है। किसानों के बीच उनके प्राकृतिक संसाधन आधार, भूमि की गुणवत्ता और स्थानीय और क्षेत्रीय बाजारों से जुड़ाव के अनुसार प्रौद्योगिकी की आवश्यकता भिन्न होती है। छोटे किसानों के लिए टिकाऊ उत्पादकता बढ़ाने की अपार संभावनाएं हैं। वैदिक खेती के अत्यधिक मूल्यवान गुणों और व्यापक अनुप्रयोगों को बढ़ावा देने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण आवश्यक है इसलिए इसके लाभों के बारे में लोगों को शिक्षित करने से खाद्यान्न, ईंधन, पोषण और मिट्टी के स्वास्थ्य की कमी की समस्याओं और ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में समाधान मिल सकता है। उर्वरकों और कीटनाशकों के खतरनाक प्रभाव, इन पर्यावरण के अनुकूल पारंपरिक कृषि आदानों का उपयोग जैविक किसानों को वैकल्पिक उत्पादन प्रौद्योगिकियां प्रदान करता है।

23. शून्य बजट प्राकृतिक खेती से अधिक लाभ

प्रदीप कुमार कुमावत', रीना, तालीम, रंजना बाली एवं पुष्पेंद्र कुमार यादव

शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) किसान की लागत को कम करने का सबसे अच्छा उपाय है। शून्य बजट शब्द का अर्थ है "कोई ऋण नहीं" और प्राकृतिक खेती का अर्थ है "उर्वरक और रासायनिक उपयोग के बिना फसल उगाना"। यह विचार चार अवधारणाओं पर काम करता है, जो निम्न हैं जीवामृत, बीजामृत, मल्चिंग और मिट्टी संरक्षण। इसमें कीट नियंत्रण के प्राथमिक तरीकों के रूप में सांस्कृतिक प्रथाओं में एक छोटे से संशोधन के माध्यम से पहले सावधानीपूर्वक योजना बनाना शामिल होना चाहिए। प्राकृतिक खेती में कीटों के प्रकोप को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न तरीके अंगियास्त्र, ब्रह्मास्त्र और निमास्त्रा अधिक से अधिक आर्थिक पैदावार तथा कीट के रोकने का काम करते हैं। भारत में प्राकृतिक कीट प्रबंधन में आमतौर पर इस्तेमाल की जाने वाली पशु सामग्री आधारित और पौधे आधारित उत्पाद पंचगव्य और दसगव्य हैं। पंचगव्य, एक जैविक उत्पाद में वृद्धि को बढ़ावा देने और पादप प्रणाली में प्रतिरक्षा प्रदान करने की भूमिका निभाने की क्षमता है। साथ ही फलों, सब्जियों और बीजों की गुणवक्ता को बढ़ाने के लिए शून्य बजट प्राकृतिक खेती का उपयोग कर किसान रसायन मुक्त भोजन कर सकेंगे। इस उत्पाद को विभिन्न फसलों को नुकसान करने वाले कीटों पर हानिकारक प्रभाव के लिए जाना जाता है। ये अवधारणाएं बेहतर मिट्टी के स्वास्थ्य, मर्दा सूक्षम जीव में वृद्धि, गुणवत्ता वाले उत्पाद और फसल की उपज बढ़ाने में मदद करती हैं। बीज, उर्वरक और पौध संरक्षण रसायनों की लागत को कम करने में कारगर रही है।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) में कीट कीट प्रबंधन के तरीकेः

इस अवधारणा को **श्री सुभाष पालेकर** द्वारा पेश किया गया था, जिसके लिए उन्हें 2016 में भारत के चौथे सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार, पद्म श्री से सम्मानित किया गया था। शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF), जिसे शून्य बजट आध्यात्मिक खेती (ZBNF) भी कहा जाता है। इस खेती में किसान मल्चिंग, मिट्टी संरक्षण तकनीक, प्राकृतिक कीटनाशकों, कवकनाशी और उर्वरकों का उपयोग कर रहे हैं। ZBNF के तरीकों में फसल बदलाव हरी खाद और खाद, जैविक कीट नियंत्रण और यांत्रिक खेती शामिल हैं। ZBNF की पाँच सबसे महत्वपूर्ण विधियाँ हैं अर्थात अग्निस्त्र, ब्रम्हस्त्र, नीमस्त्र, जीवामृत, बीजामृत

शून्य बजट प्राकृतिक खेती की गुणवत्ताः–

- शून्य बजट प्राकृतिक खेती में बाजार से कुछ भी नहीं खरीदना पड़ता है। पौधे की वृद्धि के लिए आवश्यक सभी चीजें पौधों के जड़ क्षेत्र के आसपास उपलब्ध हैं।
- लगभग 98.5 प्रतिशत पोषक तत्व हवा, पानी और सौर ऊर्जा से लिए जाते हैं। मिट्टी से लिए गए शेष 1.5% पोषक तत्व भी निःशुल्क उपलब्ध होते हैं क्योंकि यह समृद्ध मिट्टी से लिया जाता है जो सभी पोषक तत्वों से समृद्ध होती है।
- स्थिरता के प्रति दृष्टिकोण।
- एक व्यय मुक्त खेती।
- एक देशी गाय से 30 एकड़ तक की खेती, न्यूनतम बिजली के साथ खेती, पानी की खपत और गुणवत्तापूर्ण भोजन का उत्पादन।
- उच्च शुद्ध आय और बाहरी श्रम की आवश्यकता को कम करने के लिए खेती की तकनीक बहुफसली खेती है।

प्राकृतिक खेती में कीट प्रबंधनः

प्राकृतिक खेती का लक्ष्य कीटों की आबादी को स्वीकार्य स्तर से नीचे रखने के लिए कीट और शिकारी के बीच संतुलन को नियंत्रित करना और बहाल करना है। पिछले दो दशकों के दौरान, पर्यावरण संरक्षण और खाद्य गुणवत्ता सुनिश्चित करने की दिशा में समुदाय का महत्वपूर्ण वैश्वीकरण हुआ है। प्राकृतिक खेती कीड़ों की आबादी को दबाने के लिए नहीं है, क्योंकि उन्होंने प्राकृतिक व्यवस्था में भी भूमिका निभाई है। एक बार जब कीटों ने फसल पर हमला करना शुरू कर दिया, तो क्षति की

मरम्मत नहीं की जा सकती और नियंत्रण करना कठिन हो जाता है। जहां संभव हो, सबसे पहले कीटों के हमले से बचने या रोकने के लिए विभिन्न तकनीकों का उपयोग करें। प्राकृतिक खेती का मानना है कि यह इन दोनों मांगों को पूरा कर सकती है और ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों के पूर्ण विकास का साधन बन सकती है। लगभग एक सदी के विकास के बाद, जैविक और साथ ही प्राकृतिक खेती को अब मुख्य धारा द्वारा अपनाया जा रहा है और यह व्यावसायिक, सामाजिक और पर्यावरणीय रूप से सबसे सुरक्षित वादा दिखाता है। जबकि पहले के दिनों से लेकर वर्तमान तक विचारों की निरंतरता है, आधुनिक प्राकृतिक आंदोलन अपने मूल रूप से मौलिक रूप से भिन्न है। स्वस्थ मिट्टी, स्वस्थ भोजन और स्वस्थ लोगों के लिए संस्थापकों की चिंताओं के अलावा अब इसके मूल में पर्यावरणीय स्थिरता है। प्राकृतिक खेती में कीट प्रबंधन इस तरह से होना चाहिए कि यह पारिस्थितिकी तंत्र में मौजूद पारिस्थितिक संतुलन को प्रभावित न करे और हमें कीटों के हमले से मुक्त अधिक आर्थिक पैदावार प्राप्त करने में सक्षम बनाए। कीट प्रबंधन रणनीतियों की श्रृंखला की योजना पहले से अच्छी तरह से बनाई जानी चाहिए ताकि पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को टिकाऊ बनाया जा सके और कीटों के हमले का प्रतिरोध किया जा सके।

प्राकृतिक खेती के लिए कीट प्रबंधन रणनीतियाँः

प्राकृतिक खेती में कीटों के प्रबंधन के लिए निम्नलिखित श्रेणियों में प्रभावी अनुप्रयोगः–

- हेज पंक्तियों, आश्रय पेटियों, आदि के प्रावधान के माध्यम से प्राकृतिक शत्रुओं को बहाल करने के लिए संरक्षण अभ्यास।
- जैविक नियंत्रण एजेंटों जैसे कीट परभक्षी, परजीवी, कीट रोगजनकों का उपयोग एजेंटों को लगाने या जारी करने से।
- उपचारात्मक नियंत्रण उपायों के रूप में वानस्पतिक और जैविक कीटनाशकों का उपयोग।

कीट प्रबंधन विकल्प

प्राकृतिक शत्रुओं की बहाली के लिए संरक्षण के तरीके प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण में प्राकृतिक शत्रुओं की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए उनके अस्तित्व, उर्वरता, दीर्घायु और व्यवहार को बढ़ाने के लिए पर्यावरण में हेरफेर शामिल है। इस तरह के संरक्षण प्रयासों को हानिकारक परिस्थितियों को कम करने या अनुकूल परिस्थितियों को बढ़ाने के लिए निर्देशित किया जा सकता है। संरक्षण प्रथाओं को आगे उन लोगों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जो मृत्यु दर को कम करने, पूरक संसाधन प्रदान करने, द्वितीयक दुश्मनों को नियंत्रित करने, या प्राकृतिक दुश्मनों के लाभ के लिए मेजबान पौधों की विशेषताओं में हेरफेर करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं (हलधर एट अल, 2017)।

वयस्क परजीवी अमृत पर भोजन करते हैं और निर्भर करते हैंः अध्ययनों से पता चला है कि हमारे परिदृश्य में उपयुक्त अमृत स्रोत उपलब्ध होने पर दीर्घायु और उर्वरता बढ़ जाती है। इससे परजीवियों की दर और कीटों की प्रजातियों के नियंत्रण पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। फूलों के पौधे जैसे गेंदा (टैगेट), पुदीना (मेंथा), सूरजमुखी (हेलियनथस एनस), सनहेम्प (क्रोटेलारिया जंकिया) और साथ ही स्थानीय फलियाँ उपयोगी आकर्षक पौधे हैं। हरी मक्खी पर होवरफ्लाइज, लार्वा फ़ीड जड़ी–बूटियों और सब्जियों के फूलों जैसे कि सौंफ, अजवाइन, डिल, गाजर और पार्सनिप (अम्बेलिफेरी परिवार) की ओर आकर्षित होते हैं। ये फूल जो अमृत और पराग प्रदान करते हैं, वह इन कीड़ों द्वारा रखे गए अंडों की संख्या को बढ़ाने में मदद करेगा। अम्बेलिफ़र्स विभिन्न परजीवी ततैया को भी भोजन प्रदान करेंगे जिनके युवा एफिड्स और कुछ कैटरपिलर पर रहते हैं।

वयस्क लाभकारी कीट अक्सर पराग का उपयोग खाद्य स्रोत के रूप में करते हैं। उदाहरण के लिए, वयस्क होवरफ्लाइज़ पराग का उपयोग करते हैं और उन्हें अंडे परिपक्व करने और अपने युवा पैदा करने की आवश्यकता हो सकती है, जो एफिड शिकारी हैं। कुछ परभक्षी कीट अपना जीवन चक्र पूरी तरह से पूरक आहार पर पूरा करने में सक्षम होते हैं।

भोजन का एक निरंतर स्रोत प्रदान करने से लाभकारी कीड़ों का प्रवास धीमा हो जाएगा और उन्हें उच्च जनसंख्या स्तरों पर रखा जाएगा। रिफ्यूजिया एक गैर–फसल क्षेत्र है जहां लाभकारी कीड़ों को सूक्ष्म आवास प्रदान किए जाते हैं जो उनके अस्तित्व और दृढ़ता में योगदान करते हैं। जब वे शिकार की तलाश में नहीं होते हैं तो उन्हें छिपने के लिए जगह चाहिए होती है। इस क्षेत्र को ओवरविन्टरिंग

आवास भी प्रदान करना चाहिए। सामान्य तौर पर जितना अधिक पौधा–समृद्ध क्षेत्र होता है, उतनी ही अधिक प्राकृतिक नियंत्रण काम करेगा। लेकिन कुछ कीट प्राकृतिक दुश्मन घास या फलियां मोनोकल्चर में घास और फलियों के मिश्रण की तुलना में अधिक प्रभावी होते हैं, इसलिए पौधों की विविधता प्राकृतिक नियंत्रण को सार्वभौमिक रूप से प्रोत्साहित नहीं करती है। लाभकारी कीड़ों के संरक्षण के कई अलग–अलग तरीकों का परीक्षण किया गया है जैसे मिट्टी, पानी और फसल अवशेषों का प्रबंधन; अलग–अलग फसल पैटर्न और गैर–फसल और बढ़ते पौधे जो लाभकारी प्रजातियों को आकर्षित करते हैं (हलधर एट अल., 2017)।

फील्ड बॉर्डर और हेज रो: फील्ड बार्डर और हेजरो लाभकारी कीड़ों वाले आवासों के पूरे संयोजन के एक महत्वपूर्ण घटक का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह संभावना नहीं है कि लाभकारी कीड़ों की सभी जीवित रहने की जरूरतों को क्षेत्र की सीमाओं के भीतर पूरा किया जाएगा। कई लाभकारी कीट अपने समय का कुछ हिस्सा खेत की सीमाओं या हेज पंक्तियों में बिताएंगे। ये क्षेत्र ऐसे गलियारे भी प्रदान करते हैं जिनका उपयोग लाभकारी कीट एक खेत से दूसरे खेत में जाने के लिए करते हैं। प्राकृतिक नियंत्रण को प्रोत्साहित करने के लिए एक संपूर्ण योजना विकसित करने के लिए इन सभी क्षेत्रों पर कुछ विचार करने की आवश्यकता है। हेज पंक्तियों में पौधों में आमतौर पर प्राकृतिक वनस्पति होती है जिसे जितना व्यावहारिक रूप से संरक्षित किया जाना चाहिए। फील्डबॉर्डर, इस पर निर्भर करते हुए कि उनका प्रबंधन कैसे किया जाता है, आमतौर पर इसमें वार्षिक पौधे होते हैं। वार्षिक पौधों का प्राकृतिक परिसर लाभकारी कीड़ों के लिए आवश्यक आवास और संसाधन प्रदान कर सकता है। कुछ अभ्यास पौधों के वांछित मिश्रण को बनाए रखने में मदद कर सकते हैं। उदाहरण के लिए किसी विशेष समय अंतराल या ऊंचाई पर बुवाई करने से लकड़ी के बारहमासी वनस्पति के उत्तराधिकार की प्राकृतिक प्रक्रिया रुक जाएगी। पौधों के मिश्रण को बनाए रखने के लिए कुछ योजनाएँ बनानी चाहिए। बहुत बार, सीमाओं को तब तक छोड़ दिया जाता है जब तक कि उन्हें काटने का समय न हो। कुछ कीट समस्याएं, जैसे कि घुन, गर्मियों के मध्य तक घास काटने की प्रतीक्षा करके फैल सकती हैं। अनुरक्षण कार्यक्रम पर निर्णय लेने से पहले क्षेत्र की सीमाओं को बनाए रखने के बारे में उपलब्ध सभी जानकारी एकत्र करें। सफेद मक्खी के लिए एक बाधा के रूप में मक्का, ज्वार और बाजरा जैसी गैर–मेजबान सीमावर्ती फसलों का उपयोग करें।

जैविक नियंत्रण एजेंटों का उपयोग: कीट परभक्षी और परजीवी जैसे जैविक नियंत्रण एजेंटों को निष्क्रिय और निष्क्रिय रिलीज या लागू करने से कीट कीटों को नियंत्रित करने में बड़ी भूमिका निभानी होगी। प्राकृतिक शिकारियों को उस क्षेत्र में रहने और प्रजनन के लिए प्रोत्साहित करके छोटे पैमाने पर इसे प्राप्त किया जा सकता है जहां कीट एक समस्या है। यह उनके लिए घर उपलब्ध कराने के लिए खेत के चारों ओर पेड़ और बाड़ लगाने से प्राप्त किया जा सकता है। कई कीड़े और जानवर हैं जिन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि वे कीटों को खाते हैं। ये कुछ उदाहरण हैं: मेंढक, टोड, हाथी, चूहे, मोल, चमगादड़, पक्षी, गिरगिट, छिपकली, मकड़ी, चींटियाँ, हत्यारे कीड़े, काले–घुटने वाले कैप्सिड, मधुमक्खियां, शाखायुक्त ततैया, परजीवी ततैया, गोबर भृंग, ग्राउंड बीटल, केंचुए, बाज़ पतंगे, ड्रैगन मक्खियाँ, होवर फ्लाइज़, लेसविंग और स्टिक कीड़े।

शिकारियों और परजीवी एजेंटों सहित ये जैविक नियंत्रण तब उपयोगी होंगे जब प्राकृतिक खेती में कीटों की आबादी में अचानक प्रकोप होता है, जो पहले के नियंत्रण उपायों के विपरीत होता है, जिनकी योजना पहले से बनाई जानी होती है। हालांकि, कार्रवाई का धीमा तरीका, पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए इन जैव नियंत्रण एजेंटों की संवेदनशीलता और आर्थिक सीमा स्तर (ई.टी.एल) से नीचे कीट को नियंत्रित करने की क्षमता प्राकृतिक खेती में जैव नियंत्रणएजेंटों के बड़े पैमाने पर उपयोग में बाधा उत्पन्न करेगी। *Cotesia plutellae* भारत में डायमंड बैक मोथ का सबसे आम लार्वा परजीवी है और बिना छिड़काव वाली परिस्थितियों में 40–60 प्रतिशत परजीवीवाद का कारण बनता है (कृष्णा मूर्ति एट अल।, 2006)। एक शिकारी बग, राइनोकोरिसफ्यूसिप्स, एपिलाचना बीटल (चंदेल एट अल., 2007) के सभी चरणों पर फ़ीड करता है।

वानस्पतिक और जैव–रसायनों का उपयोग: नीम, पोंगामिया और तंबाकू जैसे पौधों से कच्चे अर्क के साथ–साथ वाणिज्यिक योगों, जो कीटों के प्रबंधन के लिए पारंपरिक कृषि में प्रभावकारिता दिखाते हैं, उनकी कम अवशिष्ट क्रिया और पारिस्थितिक होने के कारण प्राकृतिक खेती में अनुमति दी गई थी।

सुरक्षा। वानस्पतिक अपने पाचन तंत्र के माध्यम से कीड़ों को जहर देने या तेज गंध और स्वाद वाले कीड़ों को पीछे हटाने का काम करते हैं। कुछ हार्मोन जैसे पदार्थों के साथ जीवन चक्र के चरणों को बाधित करते हैं। गोभी में लेपिडोप्टेरस लार्वा कॉम्प्लेक्स को कम करने में मेलियाजेदारच (ड्रूप्स), लैंटाना कैमरा (पत्तियां), रुमेक्सनेपलेंसिस (जड़) और आर्टिमिसिया ब्रेविफोलिया (पत्तियाँ) का क्रूड फॉर्मूलेशन भी अत्यधिक प्रभावी है। भारत में जैविक और प्राकृतिक खेती में कीटों को नियंत्रित करने के लिए उपयोग किया जाने वाला अर्क। नीम के पत्तों को 5 किलो, विटेक्सनेगुंडो के पत्ते 2 किलो, अरिस्टोलोचिया के 2 किलो, पपीते के 2 किलो, टिनोस्पोराकोर्डिफोलिया के पत्ते, 2 किलो, कस्टर्ड सेब के 2 किलो, करंजा के पत्ते 2 किलो, अरंडी के पत्ते 2 किलो, नेरियम इंडिकम 2 किलो को मिलाकर तैयार किया जाता है। कैलोट्रोपिस प्रोसेरा 2 किलो, हरी मिर्च पेस्ट 2 किलो, लहसुन पेस्ट 250 ग्राम, गाय का गोबर 3 किलो और गोमूत्र 200 लीटर पानी में एक महीने के लिए उबाल लें। दिन में तीन बार नियमित रूप से हिलाएं। कुचलने और छानने के बाद निकालें। अर्क को 6 महीने तक संग्रहीत किया जा सकता है और एक एकड़ के लिए पर्याप्त है। करंज केक (44.8 प्रतिशत) के उपचार में सफेद ग्रब की उच्चतम प्रतिशत मृत्यु दर देखी गई।

चाऊ और हीओंग (2005) ने बताया कि चिकन हॉगमैनर कम्पोस्ट के उपचार में मकड़ियों का घनत्व 7.5 टन/हेक्टेयर और 31.9/वर्ग फीट जैविक खाद के उपचार में था। पार्थेनियम और नीम के पत्तों को बराबर मात्रा में लेकर पीसकर 24 घंटे के लिए पानी में भिगो दें। अर्क का छिड़काव/20 मिली/10 लीटर पानी में किया जाता है, जिससे मिर्च में हेलिकोवर्पा आर्मिगेरा क्षति में काफी कमी आती है जैविक प्रबंधन के तहत उगाई गई मेथी में न्यूनतम एफिड संक्रमण 95 डी.ए.एस. और 15 दिनों के अंतराल पर नीम के तेल (1 प्रतिशत) के तीन पत्ते के आवेदन के साथ दर्ज किया गया था, जो करंज तेल (1 प्रतिशत), लहसुन बल्ब के अर्क से काफी बेहतर था। 5 प्रतिशत) और नीम की पत्ती का अर्क (5 प्रतिशत)।

भारत में प्राकृतिक कीट प्रबंधन में आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले कुछ पशु उत्पाद आधारित शंखनाद पंचगव्य और दसगव्य हैं। पंचगव्य, एक जैविक उत्पाद में वृद्धि को बढ़ावा देने और पादप प्रणाली में प्रतिरक्षा प्रदान करने की भूमिका निभाने की क्षमता है। पंचगव्य में 5 उत्पाद शामिल हैं। गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, और घी। जब उपयुक्त रूप से मिश्रित और उपयोग किया जाता है, तो ये चमत्कारी प्रभाव डालते हैं। यह उत्पाद हमला करने वाले कई कीटों पर हानिकारक प्रभाव के लिए जाना जाता है विभिन्न फसलें जब 3प्रतिशतघोल की खुराक पर उपयोग की जाती हैं। दशगव्य पंचगव्य का एक प्रकार है जो पंचगव्य में कुछ पौधों के अर्क को मिलाकर तैयार किया जाता है। लैंटाना कैमरा, ल्यूकसस्पेरा, धतूरा धातु, फाइटोलैका ओक्टेन्ड्रा, और आर्टेमिसिया नीलगिरीका जैसे खरपतवारों के पत्ते के अर्क को फिर 1:1 के अनुपात में गोमूत्र में भिगोया जाता है (1 लीटर गोमूत्र में 1 किलो कटा हुआ पत्ते) दस दिनों के लिए फिर पंचगव्य में मिलाया जाता है। दशगव्य का छिड़काव सप्ताह में एक बार सभी सब्जी और बागान फसलों के लिए किया जा सकता है। दशगव्य एफिड्स, थ्रिप्स, व्हाइट मक्खियों, माइट्स और पर्ण कैटरपिलर जैसे कीटों को भी नियंत्रित करता है। सब्जी फसलों पर तीन बार दशगव्य का 3प्रतिशतघोल में छिड़काव करने से अधिक उपज दर्ज की गई। इन पशु आधारित उत्पादों को प्राकृतिक कीट पीड़क प्रबंधन में उनके उपयोग के लिए वैज्ञानिक रूप से मान्य किया जाना है।

निष्कर्ष:

- प्राकृतिक खेती में कीट प्रबंधन किसी भी कीटनाशक के उपयोग के बिना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इसमें कीट नियंत्रण के प्राथमिक तरीकों के रूप में सांस्कृतिक प्रथाओं में मामूली संशोधन के माध्यम से पहले से सावधानीपूर्वक योजना बनाना शामिल है। कीटों से बचाव की दूसरी पंक्ति के रूप में जैविक नियंत्रण एजेंटों और अन्य पौधों पर आधारित उत्पादों के उपयोग जैसे पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं का उपयोग।
- आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ वैकल्पिक फसल संरक्षण योजनाओं को समर्थन और विकसित करने के लिए, अनुसंधान की वैकल्पिक लाइनें, मूल्य समर्थन, कृषि नीतियां और भूमि उपयोग प्रथाओं को अपनाने की आवश्यकता हो सकती है।